तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

अप्रैल-2020 रु.5/-

२०२० अप्रैल ०२ से १० तक

ऑंटिमिट्टा

श्री कोदंडरामस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

नागलापुरम्

श्री वेदवल्ली सहित श्री वेदनारायणस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

दि. ०५-०५-२०२० से दि. १३-०५-२०२० तक

०५-०५-२०२०
मंगलवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

०६-०५-२०२०
बुधवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

०७-०५-२०२०
गुरुवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

०८-०५-२०२०
शुक्रवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

०९-०५-२०२०
शनिवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

१०-०५-२०२०
रविवार
दिन - हनुमन्तवाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

११-०५-२०२०
सोमवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

१२-०५-२०२०
मंगलवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

१३-०५-२०२०
बुधवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः॥
(- श्रीमद्भगवद्गीता १-९)

और भी मेरे लिये जीवन की आशा त्याग देनेवाले बहुत-से शूरवीर अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित और सब के सब युद्ध में चतुर हैं।

गीतानाम सहस्त्रेण स्तवराजो विनिर्मितः।
यस्य कुक्षौच वर्तेत सोऽपि नारायणः स्मृतः॥
(- गीता मकरंद, गीता का प्रभाव)

गीता के सहस्त्रनामों से निर्मित स्तवराज्य का स्मरण जो मनुष्य मन में करेगा वह साक्षात् नारायण स्वरूप कहा गया है।

ति.ति.दे. मंदिरों की
संदर्शन-यात्रा पैकेज दूर

आंध्रप्रदेश ट्यूरिजम् डेवलप्मेंट कार्पोरेषन्

1. स्थानिक आलयों का दर्शन (प्रतिदिन)

शुल्क	निकलने का स्थान	ट्रिप्स	समय
नान् ए.सी. रु.100/- ए.सी. रु.150/- (10 वर्ष के अन्दर बच्चों को टिकट का जरूरत नहीं है।)	श्रीनिवासम् समुदाय और विष्णुनिवासम्, तिरुपति	6 (छे)	सुबह 6-00 बजे से दोपहर 1-00 बजे तक

दर्शनीय मंदिर

1. श्री पद्मावती देवी मंदिर ... तिरुचानूर
2. श्री अगस्त्येश्वर स्वामी मंदिर ... तोंडवाडा
3. श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर ... श्रीनिवासमंगापुरम्
4. श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर ... तिरुपति
5. श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर ... तिरुपति

2. तिरुपति के आस-पास मंदिरों का संदर्शन यात्रा (प्रतिदिन)

शुल्क	निकलने का स्थान	ट्रिप्स	समय
नान् ए.सी. रु.250/- ए.सी. रु.350/- (10 वर्ष के अन्दर बच्चों को टिकट का जरूरत नहीं है।)	श्रीनिवासम् समुदाय और विष्णुनिवासम्, तिरुपति	2 (दो)	सुबह 8-00 बजे को और सुबह 9-00 बजे को

दर्शनीय मंदिर

1. श्री वेणुगोपाल स्वामी मंदिर ... कार्वेटिनगरम्
2. श्री वेदनारायण स्वामी मंदिर ... नागलापुरम्
3. श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर ... नारायणवनम्
4. श्री प्रसन्न वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर ... अप्पलायगुंटा
5. श्री करियमाणिक्य स्वामी मंदिर ... नगरि
6. श्री अन्नपूर्णासमेता काशीविश्वेश्वर स्वामी मंदिर ... बुग्ग
7. श्री पल्लिकोण्डेश्वर स्वामी मंदिर ... सुरुटुपल्लि

अन्य विवरण के लिए कृपया सम्पर्क करें दूरभाष : **0877 - 2289123, 2289120, 9848007033.**

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति।।

वर्ष-५० अप्रैल-२०२० अंक-११

विषयसूची

रामो विग्रहवान् धर्मः	डॉ.जी.सुजाता	07
युग युगों के एकशिलानगर	डॉ.बी.के.माधवी	10
वैरमुडि ब्रह्मोत्सव	श्रीमती नीता गोकुलजी दरक	13
परशुरामावतार	श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया	15
जगद्गुरु श्री आदिशंकराचार्य का जीवन - एक परिचय	डॉ.के.एम.भवानी	18
श्री रामानुजस्वामीजी के गुरु	श्री अनुज कुमार अगर्वाल	22
भागवत कथा सागर राजा चित्रकेतु की कथा	श्री अमोघ गौराँग दास	25
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	31
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	34
स्वयं तुम अपने सुखों एवं दुःखों के उत्तरदायी हो!	श्री अमोघ गौराँग दास	35
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	37
दिव्यक्षेत्र तिरुमल	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	39
श्री धनुर्दास स्वामीजी	श्री गिरिधर गोपाल वी.दरक	43
अन्नमय्या के जीवन का इतिहास	श्रीमती पी.सुजाता	45
हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	48
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	51
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	52

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

अन्य विवरण के लिए:
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, 2264360.

मुखचित्र - श्री सीतालक्ष्मण सहित श्री कोदंडरामस्वामीजी, ओंट्टिमिट्टा
चौथा कवर पृष्ठ - श्री सीतारामजी का पट्टाभिषेक महोत्सव

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

- प्रधान संपादक

संपादकीय

श्रीरामायण महाकाव्यावतरण

श्रीरामचरित रसभरित हैं। लोक व्यवहार को स्पष्ट रूप से बोध करानेवाले काव्य 'रामायण' जैसे दूसरा काव्य नहीं है। आदिकवि वाल्मीकि से लेकर आजतक रमणीय राम कथा विविध भाषाओं में, विविध पद्धतियों में बनती जा रही है। यह भारत के अलावा भरतीयों की संस्कृति प्रसारित हुए अन्य देशों में भी प्रचार एवं प्रशस्ति प्राप्त की गई।

रामायण आदिकाव्य है। ब्रह्मदेव के अनुग्रह से वाल्मीकि महर्षि ने इस महाकाव्य की रचना के लिए कारण भूत हुआ। उस तपस्वी तमसा नदी में स्नान के लिए जाने पर, उस नदी के तट पर करुणा रसात्मक दृश्य दिखाई पड़ा। सामने पेड़ की डाली पर श्रृंगार में डूबे हुए क्रौंच मिथुन नरपक्षी को शिकारी के द्वारा छोड़े गए बाण की वजह से पृथ्वी पर गिर कर प्राणों को छोड़ देता है। उस दृश्य को देखकर मादा पक्षी बिलख-बिलख कर रोती है। उस पक्ष की क्रंदन को देखकर महर्षि हृदय करुणापूरित हो जाता है। अकस्मात उनके हृदय शोक 'श्लोक' में परिणित हो जाता है।

''मा निषाद! प्रतिष्ठां त्व मगम श्शाश्वतीस्समाः।
यत् क्रौंचमिथुना देक मवधीः काममोहितम्।''

हे निषाद! काम मोहित हुए क्रौंच पक्षी जोडी में से एक को मारने की वजह से तुम ज्यादा समय तक जी नही सकते। यह तो शिकारी के लिए शाप मात्र नहीं। इस श्लोक में रामायण कथा को सूचित करनेवाली दूसरे अर्थ भी हैं। उस समय ब्रह्म प्रत्यक्ष होकर ऐसा कहा - ''तुम्हारे मुँह से सरस्वती निकली। यह तो मेरा संकल्प है। अब तुम रामायण की रचना करो। यह भूतकाल में शाश्वत के रूप में रहेगा।''

वाल्मीकि महर्षि ''मा निषाद'' नाम के श्लोक उच्चारण करने तक लौकिक वाङ्मयम में चंदोबद्ध वाणी नहीं थी। रामायण काव्यावतरण केलिए इस क्रौंच मिथुन कथा हेतुभूत हुआ आदिकवि के नाम से 'वाल्मीकि' प्रशस्ति पायी। कवितानंद के साथ-साथ महिमा सिद्धि को प्रदान करानेवाले ग्रंथ की तरह 'श्रीरामायण' प्रशस्ति प्राप्त की गई।

तेलुगु प्रदेश में, तेलुगु बात करनेवाले के मुँह में श्री सीताराम कण-कण में, प्रत्येक अक्षर में प्रकाशित होनेवाली दिव्य-दंपती है। श्रीरामायण पढ़ने से माता-पिता के प्रति भक्ति की भावना, भाइयों के प्रति प्यार की भावना, ज्येष्ठानुवर्तन, लोक मर्यादानुसरण, प्रतिज्ञा पालन, आश्रितवात्सल्य, स्वामी कार्य को निर्वहण करने की क्षमता, स्वार्थपरत्वनिवृत्ति, चित्त शुद्धि, परोपकार की बुद्धि जैसे अनेक सद्गुणों की आदत होती हैं।

हम सब भी 'श्रीरामायण' काव्य पाठ करेंगे, पवित्र बनेंगे। श्रीराम के रास्ते में जाने का दृढ संकल्प से आगे बढेंगे। श्री सीताराम के संपूर्ण अनुग्रह के पात्र बनेंगे।

हरातोरण

रामो विग्रहवान् धर्मः

श्रीरामनवमी (02.04.2020) के अवसर पर...

तेलुगु मूल -
श्रीमती डी.वसुंधरा

हिन्दी अनुवाद -
डॉ.जी.सुजाता
मोबाइल - ८१८५८७११३०

भगवान विष्णु के अंश से जन्में श्रीरामजी, अपने आकर्षणीय सुन्दर रूप के साथ, अपने उच्चतमगुणों से हम सबके लिए आदर्शप्राय बनकर, धर्ममार्ग का अनुपालन करने का ज्ञान हमें प्रदान कर रहे हैं। पितृवाक्य का पालन करना चाहिए, यह विशेषता होने के कारण, दशरथराम उत्तम पुत्र के रूप में, सभी बेटों के लिए आदर्शवान बने। यह बात तब स्पष्ट हुई जब दशरथ ने रामजी को विश्वामित्र का अनुसरण करने का आदेश दिया। बिना कुछ बोले, श्रीरामजी अपने पिताजी के आदेशानुसार, विश्वामित्र का अनुपालन किया।

अब माँ को किस प्रकार सान्त्वना देना है और मुश्किलों का सामना कैसे करना है, वे बखूबी जानते हैं। जब कौशल्या ने श्रीरामजी को वनवास जाने से रोकने की कोशिश की तो, तब कौशल्याराम ने माताजी को आश्वासन देते हुए कहा कि सभी को राजा की आज्ञा का पालन करना ही पडेगा।

छोटी माँ कैकेई द्वारा अपने प्रति की गई हानि का विचार न करके, हमेशा की तरह उनके प्रति विनम्रता तथा श्रद्धा का भाव दिखाते हुए, वनवास जाते समय जिस प्रकार विनम्र और उदार होकर, उनकी आज्ञा का पालन किया है, वह देखनेवालों को आश्चर्यचकित कर देती है।

श्रीरामजी, अपनी माँ कौसल्या के साथ-साथ दूसरी छोटी माँ सुमित्रा के प्रति भी समान रूप से प्यार दिखाकर, उनके प्रति अपनी आज्ञाकारिता व्यक्त करनेवाला विनम्रमूर्ति हैं।

चाहें गुरुजनों से शिक्षा प्राप्त करने के समय हों या उनकी रक्षा तथा उनकी सेवा-सुश्रुषा करने के संदर्भों में ही, वे अपनी सीमा का उल्लंघन कभी पार नही की।

वे भाइयों के प्रति अपार प्रेम और आदर दिखाकर, उनके लिए अपने प्राणों का भी परवाह न करके, अपनी भातृप्रेम प्रकट करनेवाला भातृमूर्ति हैं।

सीता को अत्यन्त प्रेम और आदरभाव के साथ अपने हृदय में बसाकर सीताराम बनें।

केवल मित्रों से, परिवार से, परिजनों से ही नहीं, बल्कि शत्रु मारीच से भी ''रामो विग्रहवान् धर्मः'' कहकर, वैभव प्राप्त की। इतना ही नही, उनके प्रति मोह के कारण उनसे शादि करने आयी सूर्पणखा से भी प्रशंसा प्राप्त की।

धर्मबद्ध पुत्र के रूप में, आदर्श भाई, अनुरागमयी पति के रूप में, धर्मनिष्ठ व्यक्ति के रूप में श्रीरामजी का भव्य चरित्र है।

अयोध्यापुर के लोगों को प्रजारंजक शासन प्रदान करने का श्रीगणेश करनेवाला अयोध्या राम ही है। कालांतर में युग युगों तक ऐसी मान्यता बन गयी है कि प्रजारंजक शासन का मतलब रामराज्य ही है। उनका यह शासन पद्धति इतनी ख्याति प्राप्त की है, जो आज भी प्रजा शासन में, रामजी जैसे को लाने, या स्वयं श्रीरामजी को ही राजा बनाकर, शाश्वत रूप से रामराज्य को बनाये रखे, ऐसी इच्छा हम रखते हैं। हमें विरासत में रामराज्य की अनुभूति प्रदान करनेवाला भी राजाराम ही है।

मिथिला नगर हों या कोशलराज्य, कहीं पर भी राज्यकांक्षा का भाव रामजी में होने की बात हमें देखने को नही मिलती। परन्तु राज्य की रक्षा करते समय, जो बात प्रजा के लिए अहित हो (चाहे वह सीता ही क्यों न हो) उसे परित्यज्य करना ही उचित है, ऐसा मानकर अपनी प्राणप्रद सीता को भी त्यजकर राजा की धर्म निष्ठा दुनिया को दिखाया है।

श्रीरामजी की विनम्रता शिवधनुर्भंग के समय विदित होता है। रामजी की शूरता के प्रति मुग्ध होकर, महाराजा जनक ने सीता का विवाह उनके साथ करवाना चाहा, तो रामजी ने स्पष्ट रूप से कह

दिया कि पिताजी के अनुमोदन के बाद ही उनकी शादी हो सकती है। इस प्रकार विवाह के संदर्भ में बडों के अनुमोदन का प्राशस्त्य कितना महत्व रखती है, उन्होंने खुद प्रकट की। विवाह के संदर्भ में माता-पिता को निष्क्रिय नहीं करना चाहिए, इस बात का वे खुद आदर्शप्राय बनें।

रामजी अपने प्रति किया गया उपकार कभी नहीं भूलते, ऊपर से उनका प्रत्युपकार भी करते हैं। पक्षिराजा जटायु का दाहकर्म करके, पितृ समान मानकर उनको सद्गति प्रदान की। सुग्रीव को राज्य दिलवाया। विभीषण को लंका साम्राज्य दिया। सीता का कथन सुनकर, हनुमान को प्रत्युपकार करने का मौका फिर न मिलें तो उसे दुःख न पहुँचे, ऐसा सोचकर श्रीरामजी अपने को पूर्ण रूप से समर्पित करने के भाव से, उससे आलिंगन करते हैं।

रामजी दृढ़ संकल्प रखनेवाला पुरुष है। ऋषितुल्य भी है। अरण्यवास के लिए निकलते समय, दशरथ, कौसल्या, लक्ष्मण तथा गुरुजनों के कितना भी मना करने के बावजूद, वे अपने निर्णय पर अडिग रहें। भरत को पादुकाएँ देते समय, नागरिक, भरत, जाबाली, मंत्रि तथा वशिष्ठ के अनुरोध करने पर भी, भरत को राज्यभार सौंपकर वनवास दीक्षा में रहना पसन्द किया।

अश्रितों की रक्षा करने में रामजी से बडा और कोई आदर्शप्राय नही हैं। जब विभीषण ने शरणागत माँगा तो, किसी की भी बात न सुनकर विभीषण को आश्रय प्रदान की।

समस्त जीवों की संरक्षण करनेवाला, स्वयं धर्म की रक्षा करते हुए, अपनों को भी धर्म रक्षा के लिए कार्यान्वित किया। इसलिए कोई भी धर्म के बारे में कुछ भी कहें, वनवास के प्रति अनिच्छ न दिखाकर, उन्हींको धर्म सूत्र बताकर, उनसे धर्म का आचरण करवाया।

सभी जीव के प्रति प्रेम भावना रखकर, काकासुर, जटायु जैसे पशु-पक्षि, वानर और विराधा, कबन्ध जैसे राक्षसों के प्रति भी मानवीयता दिखाकर, श्रीरामजी श्रेष्ठ मानव बनें।

वेदांगों का अध्ययन करके, पंडित बनने पर भी रामजी अपने अनुभवों का अनुपालन करके दिशा निर्देशक बनें।

रामजी अयोध्या-मिथिलापुर के लोगों को ही नही, बल्कि जनपदे, जंगली लोग, मुनि व ऋषि और रावण, सूर्पणखा जैसे राक्षसों को, शबरि जैसे उत्तम योगिनी को दर्शन देकर, प्रियदर्शी बने।

स्नेह धर्म का अनुपालन करने में भी अच्छा धर्म का पालन किया। गुहु अपने राज्य में आकर अतिथि सत्कार स्वीकार करने की विनती की है तो रामजी ने कहा- ''मेरेलिए तुम्हारा राज्य अयोध्या के समान है, चाहे तुम हो या मैं हूँ, दोनों एक ही हैं।'' इस प्रकार अपनी स्नेहशीलता दिखायीं।

रामजी समुन्दर के किनारे स्वयं प्रायोपवेश करके, समुद्र की पार्थना करने पर, उनकी प्रार्थना न सुनने के कारण, समुद्र पर शर संधान करते हुए, उसे वारधी बांधने में किस प्रकार सहयोग देना है, इसका विवरण देते है, पर अभिशाप नहीं दिये। दूसरों की तृटियाँ न गिनकर, विरोधियों पर भी दया दिखानेवाले कारुण्यमूर्ति है। युद्ध के समय रथिक के बिना, अकेला, थकाहुआ, बिना हथियार के रावण का वध न करके, अपनी युद्धनीति दिखायीं।

इस प्रकार, कहने की जरूरत नही है कि परब्रह्मतत्त्व श्रीरामजी का ही साकार रूप है। वे अलौकिक, अद्भुत, तेजो, तपो, बाल, वीर, शौर्य, शक्ति संपन्न होने पर भी, रावण को दी गयी वरदान का आदर करते हुए, खुद को मानव के रूप में अभिव्यक्त करते हुए, यह सूचित करते है कि जीवन का अर्थ केवल सुखों का समाहार नहीं, कितने ही धनी हो, गरीबी आ सकती है, भले ही जोखिम आयें, नायक को अपना कौशल किसी पर भी अन्यायपूर्ण प्रदर्शित नही करना चाहिए। अगर कोई अवैध या अन्याय तरीके से अपना बलया वीरत्व का प्रदर्शन करेगा, तो उससे मदोन्मत्तता होने के सिवाय, अपने बल या वीर प्रदर्शन से उसे कोई ख्याति प्राप्त नहीं होंगी। जटिल समय में भी धर्माचरण और सत्य का साथ बिना छोडे, जीवन को साहस से सामना करके खडे होनेवाला, कभी भी हताश न होकर, सफलता प्राप्त करके, महत्कार्य का अनुपालन करके, उच्चतम आदर्शों के मार्ग दर्शक बनेंगे, ऐसा अपने स्वानुभव से कहकर महनीय मूर्ति बनें।

श्रीरामचन्द्रमूर्ति के बारे में कितना भी कहें, बात करें, पढ़ें, सुने या अनुकरण करें, तो भी वह परिपूर्ण नही हो सकती, शेष ही रह जाती है। अंत में दो बातें - श्रीरामजी एक शक्ति है। अपराजित करनेवाला दिव्य चैतन्य है। धर्माचरण तथा सत्य वाक् परिपालन, यहीं उनके महत्वपूर्ण महत् है।

राम चलता नही लेकिन चलाता है।

राम बोलता नहीं लेकिन बुलवाता है।

इसलिए तेलुगु महाकवि पोतना की सराहना के अनुसार

''पलिकिंचेडिवाडु रामभद्रुडु''

(बुलानेवाला रामभद्र है)

इन सभी विशेषताओं से हमारे अन्दर आत्मज्योति बनकर, ज्योतिर्मय होनेवाला आत्माराम 'श्रीरामजी' हैं।

हमारे मंदिर

युग युगों के एकशिलानगर

तेलुगु मूल - विद्वान के.नरसिंहुलु
हिन्दी अनुवाद - डॉ.बी.के.माधवी
मोबाइल - ९४४१६४६०४५

अब कलियुग चल रहा है। इसके पहले द्वापरयुग, इससे पहले त्रेतायुग, उससे पहले कृतयुग है। ये चार युग हैं। इन चारों युगों को महायुग कहते हैं। सृष्टि के प्रारंभ से लेकर ऐसे महायुग सत्ताईस युग बीत गये हैं। अब अट्ठाईसवाँ महायुग चल रहा है। हम उस महायुग के कलियुग में हैं। कलियुग में भी हम अब पाँच हजार एक सौ बीसवें साल में हैं। हर महायुग में प्रधान पात्र रामकृष्णादि पुनरावृत होते रहते हैं। थोडे-थोडे भेद रहते हैं। यानि-त्रेतायुग के श्रीरामचंद्र - अब तबके २८ युगों में भी अवतार लिये हैं। यह हमारे पूर्वजों के द्वारा बताये गये हैं।

कृतयुग में जांबवान का तप

जांबवान कृतयुग से लेकर तीन युगों से दर्शन दे रहे हैं। इन्होंने कृतयुग में श्रीरामचंद्र के लिए सौ वर्ष तप किये हैं। हिमालयों में रहनेवाले ये महनीय दक्षिणदेश के शेषाचल पर्वत श्रेणियों के एकश्रृंग शैल को अपने तप के स्थान रूप में चुना है। इस एकश्रृंग पर्वत को ऋक्षपर्वत भी कहते हैं। भालू अधिक रहने के कारण इस पर्वत को वो नाम पडा। इस पर्वत पर बिल्व के पेड विस्तार से हैं। इसके बारे में श्रीशैलखंड के सिद्धवट माहात्म्य के कुछ श्लोकों में बताये गये हैं। काशी रामेश्वर मार्ग में एकश्रृंग शैल है। यह शिव-केशव का अभेद स्थान है। जांबवान एकश्रृंग शैल पर उत्तर दिशा में बैठकर तप किया है। श्रीरामचंद्रमूर्ति उस पहाड के सामने रहे दूसरे श्रृंग पर से दिव्यदर्शन का अनुग्रह किया। चिरंजीव होने का वरदान दिये। आज उसी श्रृंग पर ही श्रीसीतालक्ष्मण सहित कोदंडरामालय विराजमान हुआ है।

श्रीराम का वनवास

इस मंदिर में सीतारामलक्ष्मण तीनों ही हैं हनुमान क्यों नहीं है? इसी प्रश्न का उदय होता है। सीता राम लक्ष्मणों ने त्रेतायुग में अरण्यवास के समय में थोडे दिन इस श्रृंग पर निवास किये थे। यहाँ से पश्चिम दिशा की ओर आधे कोस इस पर मृकंडु महामुनि का आश्रम था। रामलक्ष्मणों ने इस आश्रम के यहाँ राक्षसों की पीडा दूर किये हैं। थोडे दिनों के बाद रावण ने सीता का अपहरण करके ले गया। रामलक्ष्मण सीता को खोजते समय हनुमान का परिचय हुआ है। हनुमान पहले राम और लक्ष्मण को

ही देखा था। कोदंड धारण किये सीता के साथ लक्ष्मण के साथ उन्होंने नहीं देखा। इसलिए कहते है कि ओंटिमिट्टा के मंदिर में हनुमान नहीं है। हनुमान का मंदिर राममंदिर के सामने हैं। संजीवराय के रूप में आविर्भूत हैं। राम-रावण युद्ध के समय हिमालय जाकर संजीव को लाते हुए एक क्षण इस पवित्र स्थल में ठहरकर लंका वापस गया। संजीवराय के हाथ में संजीवनि मूलिकाएँ रहे होंगे। जिसको प्राणभीति है, आपदाएँ नहीं होने के लिए इस हनुमान की सेवा करते हैं।

विद्यारण्य महर्षि, ये विद्यानगर साम्राज्य के स्थापक हैं। बुक्कराय चक्रवर्ति के गुरु, दैव सर्वस्व भी है। इन दोनों के समक्ष में एकशिला में मूर्तिभूत सीतारामलक्ष्मण विग्रह की प्रतिष्ठा हुई है। दूसरे वैकुंठनगर के रूप में एकशिला नगर के रूप में भक्तजनों की पूजाएँ स्वीकार कर रही है।

यह जांबवान की प्रतिष्ठा

सीता को खोजते हुए रामलक्ष्मण किष्किंधा में रहते समय राम-सुग्रीव की मैत्री हुई। सीतादेवी को खोजने के लिए हनुमान, जांबवान, आदि सुग्रीव के मंत्री अनुचर तैयार हुए। जांबवान को श्रीरामचंद्र पहले से ही परिचित थे। उन्होंने इस प्रयत्न में वह पहले तप किये हुए एकश्रृंग शैल के पास आया। रामने जिस जगह उन्हें दिव्य दर्शन दिया था। वहाँ सोया था। दूसरे दिन सुबह वहाँ एक शिला में

सीतारामलक्ष्मण को भावना में रखकर अर्चित किये। इसके बाद सीता की खोज करने निकल पडे। जांबवान ने जहाँ शिला को खडा किया वहाँ कलियुग में मंदिर का निर्माण किया। वही जांबवान की प्रतिष्ठा हुई।

मंदिर का प्रारंभ

कलियुग में ओंटडु, मिट्टडु नामक बोय भाई इस प्रांत के जंगल पर आधिपत्य चलाई। इस प्रांत के दर्शन करने के लिए आये उदयगिरि राजा कंपराय की उपचार सेवाएँ की। सीतादेवी के लिए राम के द्वारा सृष्टित पानी के कुएँ दिखाए। जांबवान ने तप किए एकश्रृंग शैल को, राम वनवास में निवास किए गए श्रृंग को दिखाकर यहाँ एक मंदिर का निर्माण करवाने के लिए कहा था। कंपराय ने उनकी इच्छा को स्वीकार की। मंदिर के निर्वहण के लिए तालाब को भी बनाने के लिए कंपराय ने निर्णय किया। ये सारे काम उन दोनों भाइयों को सौंप दिया। इस प्रकार ओंटिमिट्टा के कोदंडरामालय की तैयारी हुई। ई.स. १३५६ में काशी से रामेश्वर की यात्रा करते हुए बुक्कराय चक्रवर्ती ने विद्यारण्य महर्षि को आगे रखकर विग्रह प्रतिष्ठा करके मंदिर और तालाब को लोगों को समर्पित किया। ओंटडु, मिट्टडु बनाये गये मंदिर रहने के जगह एक गाँव तैयार हुआ। उसे 'ओंटिमिट्टा' कहा।

मंदिर का विस्तरण

बुक्कराय प्रतिष्ठा करते समय का मंदिर आज के जैसे विशाल नहीं था। गर्भालय, मुख मंटप, गर्भालय के ऊपर छोटा शिखर मात्र ही था।

करीब ढाई शताब्द के बीतने के बाद सिद्धवट केंद्र के रूप में विजयनगर साम्राज्य में मट्लराज्य के राजा को आये। मट्ल एल्लमराजु के पुत्र अनंतराजा, अनंतराजा के पुत्र तिरुवेंगलनाथराजा इस तिरुवेंगलनाथ के पुत्र कुमारअनंतराजा - इन तीनों ने इस मंदिर का विस्तार किये।

रंगमंटप, कल्याणमंटप, महाप्राकार, तीन गालिगोपुर, संजीवरायस्वामी मंदिर, रामतीर्थ, रामुल रथ इनके काल में ही बनाये गये हैं।

ति.ति.दे. अधीन में मंदिर

महम्मदीय इस देश का आक्रमण करने के बाद मंदिर के निर्वहण में आर्थिकलोप हुआ। अंग्रेजों के आने के बाद वही परिस्थिति चला। बीसवीं शताब्दी के आरंभ में वाविलिकोलनु सुब्बाराव ने नारियल की खोपडी को पकडकर देश भर भ्रमण करके दान के रूप में नकद को संग्रहण करके मंदिर का पूर्व वैभव लाया था। आंध्रप्रदेश से तेलंगाणा अलग होने के बाद ओंटिमिट्टा मंदिर को

राष्ट्रस्थायी पह्चान मिला। मंदिर के निर्वहण का भार तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने स्वीकार किया। मंदिर के अंदर बाहर थोडे परिवर्तन किया गया है। मंदिर के सारे ओर माडवीथियों की तैयारी हुई। अंदर प्रांगण में ग्रानैट पत्थरों की तैयारी हो रहा है। बाहर बगीचे, थोडे भवन, पूरब की ओर पुष्करिणी का निर्माण हुआ है। गाँव के बाहर विशाल प्रांगण में कल्याणवेदिका का निर्माण करके वहाँ कल्याणोत्सव का निर्वहण कर रहे हैं। साल भर कई उत्सवों का निर्वहण जनाकर्षक रूप में निर्वहण कर रहे हैं। हर दिन वेदपारायण चलता रहता है। हर पूर्णिमा के दिन सीतारामकल्याण का निर्वहण कर रहे हैं।

मंदिर का दर्शन अन्नमाचार्य ने किया -

मंदिर तिरुपति-कडपा के बीच, चेन्नै-मुंबै रेल्वे मार्ग में रहने के कारण यात्रियों केलिए सुविधा जनक है। मंदिर दिन-ब-दिन वृद्धि के पथ पर है। तिरुमल श्री वेंकटेश्वर के ऊपर ३२ हजार संकीर्तनों की रचना किए गये अन्नमाचार्य यही के समीप ताल्लपाका गाँव का ही है। अन्नमाचार्य ने ओंटिमिट्टा स्वामी का दर्शन किया है। उनके ऊपर यह कीर्तन लिखा है। इस कीर्तन के भाव याद करते हुए श्रीरामचंद्र का स्मरण करेंगे। मंदिर का दर्शन करेंगे। इच्छाओं को पूरा करेंगे। अपने जीवन को पुनीत बनाएँगे।

वैरमुडि ब्रह्मोत्सव

- श्रीमती नीता गोकुलजी दरक
मोबाइल - ९८४४३३५८५८

इस वर्ष का अवतार उत्सव दि. ४ अप्रैल २०२०

कर्नाटक के मांड्या जिले में मेल्कोट नामक एक दिव्य क्षेत्र मैसूर के उत्तर में है। इसे यादवाद्री, नारायणाद्री, वेदाद्री, यदुशैल तथा तिरुनारायणपुर भी कहते हैं। यह श्रीवैष्णवों का अभिमान स्थल कहा जाता है। यहाँ श्री रामानुज स्वामीजी ने १४ वर्ष तक निवास किया और श्रीवैष्णव संप्रदाय का प्रचार प्रसार किया। यहाँ मूल विग्रह श्री तिरुनारायण भगवान हैं जो श्री रामानुज स्वामीजी को जमीन से प्राप्त हुये थे। यहाँ के उत्सव विग्रह ''श्री संपत् कुमार - श्री चेल्वनारायण - श्री रामप्रिय - श्री चेल्वपिल्लई - श्री चेल्वराया'' नाम से जाने जाते हैं। उत्सव विग्रह श्री संपत् कुमार भगवान की भगवान श्रीराम ने और तत्पश्चात् भगवान श्रीकृष्ण ने भी सेवा की है यह मान्यता है। श्री संपत् कुमार भगवान श्री रामानुज स्वामीजी को दिल्ली के बादशाह के पास प्राप्त हुये। श्री रामानुज स्वामीजी ने श्री संपत् कुमार भगवान को अपना पुत्र मानकर सेवा की।

वैरमुडि ब्रह्मोत्सव (वैरमुडि उत्सव) संपूर्ण दक्षिण भारत में तथा श्रीवैष्णवों के लिए जाना माना और महत्त्वपूर्ण उत्सव है। यह ब्रह्मोत्सव मीन मास हस्ता नक्षत्र में संपन्न होता है जो प्रतिवर्ष मार्च-अप्रैल में आता है। इस उत्सव की मुख्य विशेषता है की यहाँ प्रतिष्ठित तिरुनारायण भगवान के उत्सव विग्रह श्री संपत् कुमार भगवान की भव्य दिव्य सवारी मेल्कोट के अलंकृत वीथियों में से निकलती है। इस महोत्सव में ४,००,००० तक भक्तगण पधारते हैं। श्री संपत् कुमार भगवान श्रीदेवी भूदेवी सहित गरुडवाहन पर बिराजमान होकर सवारी में दर्शन देते हैं। उत्सव के चतुर्थ दिन यह सवारी रात में निकलकर प्रातः तक चलती है। उस दिन भगवान दिव्य हीरोंसे जड़ित 'वैरमुडि मुकुट' धारण करते हैं इसलिए यह 'वैरमुडि उत्सव' कहलाता है।

प्रह्लादजी के पुत्र विरोचन राक्षस ने भगवान अनिरुद्ध का वैरमुडि मुकुट चुराकर पाताल लोक में छिपालिया था। गरुडजी ने विरोचन राक्षस का पीछा किया, उसको युद्ध में हराकर वह मुकुट वापिस ले आए। लौटते समय मुकुट का नीलमणी थंजावर में अम्माजी के मंदिर के पास गिर गया और उसका रूपांतर एक जलप्रवाह में हुआ, जिसे मणिमुत्तरु कहते हैं। गरुडजी को मार्ग में जाते हुये भगवान श्रीकृष्ण वृंदावन में कड़ी धूप में खेलते हुये दर्शन दिये। गरुडजी ने वह मुकुट भगवान के मस्तक पर धारण कराया और स्वयं अपने पंख फैलाकर भगवान के लिए शीतल छाया का प्रबंध किया। उस समय भगवान श्रीकृष्ण संपत् कुमार भगवान की सेवा करते थे। भगवान श्रीकृष्ण ने यह मुकुट श्री संपत् कुमार भगवान को धारण करवाया।

इसी परंपरा से यह दिव्य मुकुट प्रतिवर्ष एक दिन श्री संपत् कुमार भगवान को धारण कराया जाता है, जो विशेष रूप से दर्शनीय है।

वैकुंठ से आया हुआ यह दिव्य मुकुट प्रतिवर्ष वैरमुडि ब्रह्मोत्सव में मैसूर के राजकोष से सुरक्षितरूप से लाया जाता था। अब यह मुकुट मांड्या जिले के सरकारी कोष में सुरक्षित रखा जाता है और वहाँ से लाया जाता है। यह दिव्य वैरमुडी मुकुट विशेष सम्मान सहित लाया जाता है। यह वैरमुडी मुकुट सूरज के प्रकाश में कभी नहीं निकाला जाता है। रात्रि में भगवान धारण करते हैं और दिन में यह विशेष पेटिका में सुरक्षित रखा जाता है।

ब्रह्मोत्सव के चतुर्थ दिन पर यह दिव्य वैरमुडी मुकुट धारण करके भगवान सवारी में दर्शन देते हैं। सवारी के सायंकाल में यह दिव्य वैरमुडि मुकुट श्री संपत् कुमार भगवान को श्री रामानुज स्वामीजी के समक्ष मुख्य अर्चक द्वारा धारण कराया जाता है। परंपरा के अनुसार भगवान के मस्तक पर धारण कराने से पूर्व इस मुकुट का दर्शन नहीं करना चाहिए। इसलिए धारण करानेवाले मुख्य अर्चक भी अपने नेत्रों पर रेशम की पट्टी बांधते हैं।

श्री वैरमुडी उत्सव की और एक विशेषता है। श्रीरामचन्द्र प्रभु का राज्याभिषेक मीन मास पुष्य नक्षत्र में होना निश्चित हुआ था। परंतु कैकेयी के कारण उस दिन राज्याभिषेक नहीं हो सका। श्री लक्ष्मण जी के अवतार श्री रामानुज स्वामीजी ने ठीक इसी दिन श्री संपत् कुमार भगवान को वैरमुडी मुकुट धारण कराया है। लाखों भक्तों की उपस्थिति में यह उत्सव प्रतिवर्ष संपन्न होता है और भगवान विशेष दर्शन देकर अपने भक्तों पर कृपा करते हैं।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं का भेजनेवाला पता-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,
तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

परशुरामावतार

- श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

श्री परशुराम जयंती (२५.०४.२०२०) के अवसर पर...

परशुराम त्रेतायुग (रामायणकाल) के एक ब्राह्मण थे। उनकी जयंती के अवसर पर आज हम यहाँ परशुराम चरित्र का अनुसंधान करने जा रहे है। परशुरामजी विष्णु का छठा अवतार भी कहा जाता है। पौराणिक कथाओं के अनुसार उनका जन्म महर्षि जमदग्नि द्वारा संपन्न पुत्रेष्टि यज्ञ देवराज इंद्र के प्रसन्न होने पर जमदग्नि की पत्नी रेणुका के गर्भ से वैशाख शुक्ल तृतिया को मानपुर प्रांत जानापाव पर्वत मध्यप्रदेश के इंदोर जिला में हुआ था।

वे भगवान विष्णु का अंशावतार थे।

पितामह भृगु द्वारा संपन्न नामकरण संस्कार के अनुसार 'राम' का नाम मिला, जमदग्नि का पुत्र होने के कारण जामदग्न्याय तथा शिवजी द्वारा प्रदत्त 'परशु' धारण करने के कारण ''परशुराम'' नाम मिला।

प्रारंभिक शिक्षा महर्षि विश्वामित्र एवं ऋचीक के आश्रम में से प्राप्त की। साथ में महर्षि ऋचीक से सारंग नामक दिव्य वैष्णव धनुष और ब्रह्मर्षि कश्यप से विधिवत अविनाशी वैष्णव मंत्र भी प्राप्त किया। तदनंतर कैलास गिरिश्रृंग पर स्थित भगवान शंकर के आश्रम में विद्या प्राप्त कर विशिष्ट दिव्यास्त्र ''विद्युदभी'' नामक परशु प्राप्त किया। अति प्रसन्न होकर साक्षात शिवजी ने परशुराम को भगवान श्रीकृष्ण का 'त्रैलोक्य विजयकवच', 'स्तवराज स्तोत्र' एवं 'मंत्र कल्पतरु' भी प्रदान किया।

परशुराम ने चक्रतीर्थ में किये कठिन तप से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने उन्हे त्रेता में रामावतार होने पर तेजोहरण के उपरांत कल्पांत पर्यंत तपस्यारत भूलोक पर रहने का वर दिया।

परशुराम का भाव इस जीव सृष्टि को इस के प्राकृतिक सौंदर्य सहित जीवंत बनाये रखना था। वे चाहते थे कि यह सारी सृष्टी पशु, पक्षियाँ, वृक्षो, फल, फूल और समुची प्रकृति के लिये जीवंत रहे।

यह भी ज्ञात है कि परशुराम ने अधिकांश विद्याओं अपनी बाल्यकाल में ही अपनी माता की शिक्षाओं से सीख ली थी। वे पशु पक्षी की भाषा अच्छी तरह से जानते थे और पशु पक्षी से बात भी करते थे। यहा तक की कोई भी हीसक खूंखार वनैल पशु भी उनके स्पर्श मात्र से ही उनके मित्र बन जाते थे।

उन्होंने सैन्य शिक्षा केवल ब्राह्मणों को ही दी। लेकिन इस के कुछ अपवाद भी है जैसे भीष्म और कर्ण। उनके जाने माने शिष्य में भीष्म, द्रोण और कर्ण थे।

शस्त्रविद्या का महान गुरु एवं स्तोत्र रत्नाकर परशुराम

वे शस्त्रविद्या के महान गुरु थे। उन्होंने भीष्म, द्रोण एवं कर्ण को शस्त्र विद्या प्रदान की थी। उन्होंने एकादश छंद युक्त ''शिवपंचत्वारिश नाम स्तोत्र'' भी लिखा इच्छित फल प्रदाता परशुराम गायत्री भी इस प्रकार है।

''ॐ जामदग्न्याय विद्महे महावीराय धीमहि,
तन्नो परशुरामः प्रचोदयात्।''

उन्होंने सारी पुरुष जाति से आजीवन एकपत्नीव्रत के प्रण को लेना का प्रोत्साहन दिया। अवशेष कार्यों में कल्कि अवतार के रहने के कारण उनका गुरुपद ग्रहण कर उन्हें शस्त्र विद्या प्रदान किया।

परशुरामजी का पौराणिक परिचय

परशुरामजी की कथा कई धर्मग्रंथों में मिलती है। रामायण, महाभारत, भागवतपुराण, कल्कीपुराण इत्यादि अनेक ग्रंथों में परशुरामजी की कथा मिलती है। उसने अहंकारी और दुष्ट हैहयवंशी क्षत्रियों का पृथ्वी से २१ बार संहार किया था। वे धरती पर वैदिक संस्कृत का प्रचार-प्रसार करना चाहते थे। कहा जाता है कि भारत के अधिकांश ग्राम उन्होंने ही बसाये गये है, जिस में कोंकण, गोवा एवं केरला का समावेश है। पौराणिक कथा के अनुसार भगवान परशुराम ने तिर चलाकर गुजरात से लेकर केरल तक समुद्र को पीछे धकेलते हुए नई भूमि का निर्माण किया। इसी कारण कोंकण, गोवा और केरला में भगवान परशुराम वंदनीय और पूजनीय है। वे भार्गव गोत्र की सबसे आज्ञाकारी संतानों में से एक थे, जो सदैव अपने गुरुजनों और माता-पिता की आज्ञा का पालन करते थे। वे सदा बडा का सम्मान करते थे, कभी भी उनकी अवहेलना नही करते थे।

परशुराम की आज्ञाकारी दृष्टांत पुराणों में मिलता है की, श्रीमद्भागवद् में दृष्टांत है कि गन्धर्वराज चित्ररथ को अप्सराओं के साथ विहार करता देख, हवन हेतु गंगातट पर जल लेने गई। माता रेणुका आसक्त हो गई और कुछ देर तक वही रुक गयी। हवनकाल व्यतित हो जाने से क्रोधीत मुनि जमदग्नी ने अपनी पत्नी के आर्य मर्यादा विरोधी आचरण एवं मानसिक व्यभिचार करने के दंड स्वरूप सभी पुत्रों को माता रेणुका का वध करने की आज्ञा दी। अन्य भाईयों द्वारा ऐसा दुस्साहस न कर पाने पर पिता के तपोबल से प्रभावित और आज्ञाकारी होने से परशुराम ने उनकी आज्ञानुसार माता का शिरोच्छेद और उन्हे बचाने हेतु आगे आये अपने समस्त भाईयों का भी वध कर डाला। उनके इस कार्य से प्रसन्न होकर पिता जमदग्नी जब उनसे वर मांगने को किया तब परशुरामजी ने माता एवं सभी भाईयों को पुनर्जीवित होने का एवं उनके द्वारा वध किये जाने संबंधी स्मृति नष्ट हो जाने का ही वर मांग लिया। पिताजी जमदग्नी ने सब को पुनर्जीवित किया।

परशुरामजी द्वारा हैहयवंशी क्षत्रियों का विनाश -

कथानक है कि हैहयवंशाधिपति कार्तवीर्यार्जुन (सहस्त्रार्जुन) चंद्रवंशी राजा थे। उन्हें घोर तप द्वारा

भगवान दत्तात्रेय को प्रसन्न कर सहस्त्र भुजाये तथा युद्ध में किसी से परास्त न होने का वर पाया था। संयोगवश वन में जमदग्नि के आश्रम में पहुँचे। यहाँ इन्द्र द्वारा उन्हें प्रदत्त कपिला कामधेनु गाय थी वो हडप कर ले गया और जमदग्नि का वध कर दिया। परशुराम बहुत क्रोधित हुआ। पिता जमदग्नि की मृत्यु का प्रतिशोध लेने के लिये सहस्त्रार्जुन को एक एक भुजा काटकर पूरा वध कर दिया साथ में इस के पुत्र और पौत्रों का भी वध कर दिया और उन्हें इस के लिये २१ बार युद्ध करना पडा।

परशुराम के योद्धाओं ने अनेक विग्रह किया, तब आर्यावर्त के ऋषिमुनीयों ने आर्यसंस्कार, आचार विचार चारों दिशाओं में फैलाया, इस आर्यावर्त का बहुत विस्तरण हुआ। आर्य संस्कृति पूरे देश में, पूरे हिस्से में स्थापित हो गई, आर्यों ने परशुराम को भगवान माना, परशुरामजी ने पूरे देश में नया जीवन, नयी संस्कृति, नयी एकताभाव स्थापित करके आर्य की ख्याति स्थापित किया।

परशुरामजी के संदर्भ में सुंदर दंतकथा

ब्रह्मवैवर्त पुराण में कथा मिलती है की कैलाश स्थित भगवान शंकरजी के अंतःपुर में प्रवेश करते समय गणेशजी ने रोका, तब परशुराम गुस्से हुआ और बलपूर्वक अंदर जाने की चेष्टा की। तब गणेशजी ने स्तंभित कर अपनी सूँड में लपेटकर समस्त लोकों को भ्रमण कराते हुये गोलोक में भगवान श्रीकृष्ण का दर्शन करा के भूतल पर पटका दिया। चेतनावस्था में आने पर कुपित परशुराम ने परशु से प्रहार करके गणेशजी का एक दांत को नष्ट किया, तोड दिया तब से गणेशजी एकदंत कहलाये।

भारत में कई जगह परशुराम के मंदिर स्थित है (१) परशुराम मंदिर- अत्तिराला : आंध्रप्रदेश (२) सोहनाग, सलेमपुर : उत्तरप्रदेश (३) अखनूर : जम्मु-कश्मीर (४) कुंभलगढ : राजस्थान (५) माहुर (या) महुर्गढ : महाराष्ट्र (६) पितंबरा, सिरमौर जिला : हिमाचलप्रदेश (७) जनपव हील इंदोर : मध्यप्रदेश।

परशुराम कुंड : लोहित जिल्ला अरूणाचल प्रदेश

ऐसी मान्यता है कि, माता का वध करने के बाद, परशुरामजी ने यही कुंड में स्नान करके अपने पाप का प्रायश्चित किया था।

श्री पद्मावतीश्रीनिवास का परिणयोत्सव

(दि. 01-05-2020, शुक्रवार से दि. 03-05-2020, रविवार तक)

दिनांक	वार	कार्यक्रम	
01-05-2020	शुक्र	गजवाहनोत्सव	वैशाख शुद्ध दशमी को मनाया जायेगा।
02-05-2020	शनि	अश्ववाहनोत्सव	
03-05-2020	रवि	गरुडवाहनोत्सव	

- कार्यनिर्वहणाधिकारी।

जगद्गुरु श्री आदिशंकराचार्य का जीवन - एक परिचय

श्री आदिशंकराचार्य जयंती (२७.०४.२०२०) के अवसर पर...

- डॉ.के.एम.भवानी
मोबाइल - ९९४९३८०२४६

श्रुति स्मृति पुराणानाम् आलयम् करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादम शंकरम् लोकशंकरम्।।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे।

भगवद्गीता में गीताचार्य भगवान श्रीकृष्ण ने खुद कहा था कि जब-जब धर्म की रक्षा करना, धर्म की स्थापना करना पड़ता है, तब-तब वह स्वयं आकर धर्म की रक्षा करेगा। इसी का सबूत है 'शंकराचार्य'। करीब दो हजार साल पहले धर्म भूमि, पुण्य भूमि भारत देश में विभिन्न धर्म और कर्मों के लोग अपने-अपने धर्मों के नाम पर मूर्ख बनकर एक-दूसरे को द्वेष भाव से देखने लगे, निरंतर संघर्ष करते रहे तो साधारण लोग अंधकारमय, संदिग्धावस्था में पड़ गए कि क्या करना है? किस रास्ते पर चलना है? ऐसी हालत में लोग धर्म से विमुख होकर अधर्म के मार्ग पर चलने लगे। तब इन सभी सवालों का उत्तर देते हुए शिव भगवान का अंश बनकर शंकराचार्य आया और अद्वैत मत का व्याप्त किया। लोगों की शंका को अपने वाद-विवादों से दूर करके सब धर्मों को मनाकर अद्वैत भावना को जगाया। अद्वैत का अर्थ है सृष्टि में भिन्नता नहीं है। एक ही ब्रह्म है।

''ब्रह्मसत्यम - जगत् मिथ्या''

''अहम ब्रह्मास्मि''

शंकराचार्य ऐसी बातों से लोगों में एकता को लाकर देश में शांति की स्थापना की। सिर्फ बत्तीस साल पृथ्वी पर जीने पर भी, इतने छोटे उम्र में देश भर चार बार पैदल चलकर देश के चारों दिशाओं में चार गुरु पीठों की स्थापना की। वे हैं- पूर्व के 'पूरी क्षेत्र' में 'गोवर्धन पीठ'; दक्षिण के 'श्रृंगेरी' में 'शारदापीठ'; उत्तर भारत के 'बदरीनाथ' में 'ज्योति पीठ'; पश्चिम के 'द्वारका' में 'कालिका पीठ'। अपने वादों से करीब सत्तर (७०) धर्मों के गुरुओं को हराकर सबमें अद्वैत भावना को भराकर 'काश्मीर' के 'सर्वज्ञपीठ' पर आसीन होकर सबसे प्रशंसा पाए कि 'शंकराचार्य' जगद्गुरु है।

जन्म और बचपन - ऐतिहासिक गणना के अनुसार शंकराचार्य का सन् जीवन काल ७८८ और ८२० के बीच का समय माना जाता है। केरल प्रांत के नंबूद्रि ब्राह्मण वंश में उनका जन्म हुआ था। आर्यांबा और शिवगुरु उनके माता-पिता थे। विवाह होने के बहुत साल के बाद भी संतान न होने के कारण शिवगुरु भगवान शिव की घोर तपस्या की तो शंकर के वर प्रभाव से शंकराचार्य पैदा हुए। वैशाख शुक्ल पंचमी के दिन केरल के 'कालड़ी' नामक गाँव में उनका जन्म हुआ था। शिव के वर प्रसाद होने के कारण उसका नाम 'शंकर' रखा गया।

जनेऊ संस्कार और विद्याभ्यास - शंकर के दो साल की अवस्था में ही उसके पिता स्वर्ग सिधारे। माँ आर्यांबा माता-पिता बनकर लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण किया। पाँच साल की आयु में शंकर को जनेऊ संस्कार (उपनयन) करके विद्या के लिए भेजा। एकसंधाग्राही शंकर कुछ ही

समय में सारे शास्त्रों का अध्ययन किया। आठ साल के पहले ही वे सब शास्त्रों के ज्ञाता बन गए। कम समय में ही चमत्कारिता दिखाने के लिए आया शंकर बचपन से ही अपने चमत्कार दिखाते रहे।

सन्यासी कैसे बना? - अपने आठ वीं साल में शंकर माँ से अपने सन्यासी बनने की चाह प्रकट की तो आर्यांबा उसे बिल्कुल स्वीकार नहीं कर पाई। इसलिए उसने अनुमति न देकर शंकर के शादी करने की इच्छा प्रकट की। पति को खोई आर्यांबा पुत्र पर जान रखकर जीने लगी। एक दिन आर्यांबा गंगा नदी में नहाकर किनारे पर बैठी तो शंकर नहाने लगे। इतने में एक मगर शंकर के पैर पकड़कर उसे धारा में घसीटने लगे तो शंकर ने चिल्लाते हुए माँ से कहा कि ''माँ अगर तुम मुझे सन्यासी बनने की अनुमति देगी, तो ही मगर मुझे छोडेगा, नहीं तो यह मगर मेरी जान लेकर ही छोडेगा।'' तो बेटे की जान प्यारी माँ, शंकर को सन्यासी बनने की अनुमति दे दी। तुरंत शंकर मानसिक सन्यासी बन गया।

माँ को दिया हुआ वचन - शंकर सन्यासी बनकर जब घर छोड़कर चले जाने को तैयार हुआ तब माँ ने उससे वर माँगा कि सन्यासी बनने पर भी शंकर माँ के प्रति अपनी जिम्मेदारी को निभाता ही रहेगा। शंकर जैसे कारण जन्म को पाकर आर्यांबा अनाथ रहना नही चाहा इसलिए उसने शंकर से कहा कि उसको निधन के बाद शंकर खुद उसका अंत्येष्टि संस्कार करना है। शंकर ने माँ को वर दिया कि माँ जब भी मनःपूर्वक उसे बुलाएगी तब वह जरूर उसके पास आएगा। इसीलिए माँ के निधन के बाद कितने लोग संदेह व्यक्त करने पर भी शंकराचार्य ने आर्यांबा का अंतिम संस्कार खुद किया और यह संदेश दिया कि दुनिया में एक बेटे के लिए माँ से बढ़कर कुछ भी नहीं है। सन्यासी होने की वजह से वह मात्रृ ऋण की जिम्मेदारी से हटने की जरूरत नहीं है।

कनकधारा स्त्रोत्र - सन्यासी की विधि के अनुसार शंकर रोज भिक्षायाचना करके जीवन बिताते थे। एक

दिन वह एक ब्राह्मणी के यहाँ भिक्षा माँगने गया जो बहुत निर्धन थी। उस दिन उसके पास भिक्षा देने कि लिए कुछ भी नहीं रहने के कारण एक सूर्ख आँवले को भिक्षा पात्र में डाला। उसकी गरीबी को देखकर शंकर विचलित हो गया उसी क्षण उसने माँ लक्ष्मी की प्रार्थना करते हुए स्त्रोत्र किया तो उसकी भक्ति से खुश होकर माँ ने उस ब्राह्मणी के घर सोने के आँवलों की वर्षा की। यही स्त्रोत्र 'कनकधारा स्त्रोत्र' नाम से विख्यात है।

पूर्णा नदी के प्रवाह को बदलना - जब आर्यांबा वृद्धा बन गई तब वह नियमानुसार नहाने गंगा के पास न जा सकी लेकिन वह गंगा में नहाना चाहती थी। शंकर यह जानकर 'गंगा स्तवम' करके पूर्णा नदी के प्रवाह को बदलकर अपने घर के सामने से जाने की विनती की तो गंगा माता मानकर अपनी दिशा बदलकर शंकर के घर के सामने से निकली।

उपनिषदों के व्याख्या रचना - वेदाध्ययन सभी मानवों के लिए साध्य होने की बात नहीं है। इसीलिए द्वापर युग में महर्षि व्यासजी ने वेदों का विभाजन करके 'वेदव्यास' का नाम पाया। उसने अष्टादश पुराणों के साथ-साथ महाभारत की भी रचना की। कलियुग के मानव का जीवन काल, स्थिति गतियों को नजर में रखकर श्री शंकराचार्य ने कठोपनिषद्, केनोपनिषद्, ईशावाषोपनिषद् जैसे कई उपनिषदों के लिए व्याख्याएँ लिखीं। 'भगवद्गीता' का भाष्य (व्याख्या) लिखा। साथ-साथ हिंदु धर्म के करीब सभी देवी देवताओं पर स्त्रोत्र लिखे।

'भजगोविंदम' की रचना स्पूर्ति - एक दिन शंकराचार्य रास्ते में जाते हुए देखा कि एक वृद्ध ब्राह्मण अपने घर के सामने बैठकर व्याकरण सूत्र रट रहा था। यह दृश्य देखकर शंकर को उस पर दया आई। तभी उसके मुँह से 'भजगोविंद स्त्रोत्रम' निकली जो उनकी रचनाओं में बहुत ही प्रसिद्ध है।

भजगोविंदम भजगोविंदम गोविंदम भजा मूढमते।
संप्राप्तेहिते सन्निहिते काले नही नही रक्षति डुक्रिंकरणे।

अर्थात हे मूर्ख मानव! भगवान का नाम जप करो। बूढ़े होकर भी व्याकरण सूत्र रटते रहने से तेरा उद्धार कैसे होगा। तेरा उद्धार करनेवाला तो गोविंद नाम ही है।

मंडनमिश्र से वागविवाद - विभिन्न धर्मावलंबों को हराने पर भी शंकराचार्य का मंडन मिश्र से विवाद अनोखा है। वेदों के अनुसार कर्म को ही प्राधान्यता देने वाला कर्मानुयायी मंडन मिश्र शंकराचार्य के अद्वैत भावना को बिल्कुल न मानते थे। उसे हराना चाहकर शंकराचार्य उससे वाद प्रतियोगिता के लिए तैयार हो गए। मंडन मिश्र की पत्नी उभय भारती को उन दोनों में विजेता के न्याय के निर्णेता के रूप में मान लिया गया। शंकर अपने अमोघ वाणी से मंडन मिश्र को हराया लेकिन उभय भारती भी शंकर से वाद करने की चाह प्रकट की।

क्योंकि शंकराचार्य और मंडनमिश्र के विवाद की शर्त यह रखी गयी कि अगर वाद में शंकर हार गया तो वह सन्यासत्व छोड़कर गृहस्थ बनना पडेगा। मंडन मिश्र हार गया तो वह गृहस्थाश्रम छोड़कर सन्यासी बनना पडेगा। इसीलिए जब मंडनमिश्र हारने लगे तब उसकी अर्धांगिनी उभय भारती वाद करने आ जाती है तो शंकराचार्य उससे विवाद करने को मान लेता है तो उभय भारती शंकराचार्य से कामशास्त्र के बारे में प्रश्न पूछती है। सन्यासी शंकराचार्य उस प्रश्न का उत्तर देने के लिए एक महीने का समय माँगकर, उस शास्त्र के बारे में जानकर वापस आता है। उस समय वे परकाय विद्या से (अपनी आत्मा को अन्य मरे हुए शरीर में प्रवेश करा सकता है और चाहने पर वापस अपने शरीर में वापस आ सकता है उसे परकाय शक्ति कहते हैं) एक राजा के शरीर में प्रवेश होकर काम शास्त्र का अध्ययन करता है। और उभय भारती के प्रश्न

का उत्तर देता है। बाद में विद्वानों और खुद माँ सरस्वती के सामने अपने इस काम का समर्थन करता है और साबित करता है कि वह ऐसा करने पर भी उसका सन्यासत्व भंग नहीं हुआ है। इस तरह साबित करने के बाद ही शंकराचार्य काशी के 'सर्वज्ञ पीठ' पर आसीन होता है।

लक्ष्मी नृसिंह करावलंबस्त्रोत्रम - एक बार एक कापालिक शंकर के पास आकर उसकी जान माँगता है तो शंकर सहर्ष उसके साथ जाता है तो नृसिंह स्वामी सिंह बनकर आकर उस कापालिक को मारकर शंकर को

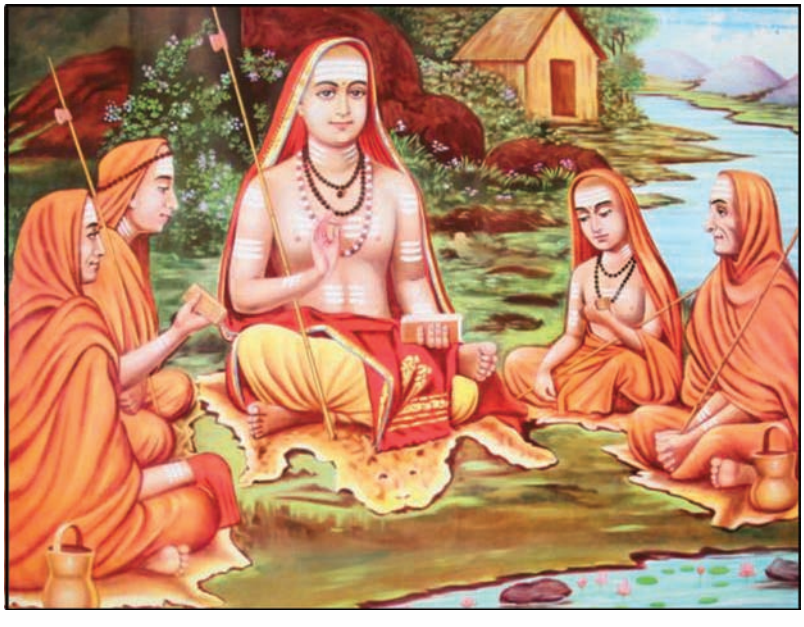

बचाता है तो उस संदर्भ में शंकर से किया गया स्त्रोत्र दुनिया में 'लक्ष्मी नृसिंह करावलंब स्त्रोत्र' के नाम से विख्यात हुआ है।

श्रीमत्योनिधि निकेतन चक्रपाणे
भोगींद्र भोग मणिरंजित पुण्यमूर्ते।

योगेश शाश्वत शरण्य भवाभ्धि
पोत लक्ष्मी नृसिंह ममदेहि करावलंबम।।

शंकराचार्य के शिष्य - मंडनमिश्र को हराने के बाद शंकराचार्य उसे सन्यासत्व देकर उसे अपना शिष्य बना लेता है और उसे अद्वैत मत प्रचारक बना देता है। शंकराचार्य के कई शिष्य रहने पर भी उनमें सुरेश्वर, पद्मपाद, हस्तामलकाचार्य, तोटकाचार्य नामक चार शिष्य बहुत प्रसिद्ध हैं। शंकराचार्य के द्वारा स्थापित चारों पीठों के प्रथम गुरु के रूप में ये चार शिष्य शंकराचार्य के उपदेशों को आगे बढाए। आज भी ये चार पीठ हिंदु धर्मावलंबों की दर्शनीय जगह बनकर हिंदु धर्म को आगे ले जाते हुए अद्वैत व्याप्ति कर रहे हैं। अपने बत्तीस वीं साल में केदारनाथ पुण्य क्षेत्र में शंकराचार्य स्वर्ग सिधारे। लेकिन उसका दिखाया मार्ग, उसकी रचनाएँ आज भी सभी के लिए आदर्श और अनुसरण योग्य रहे हैं। रहेंगे।

जय-जय शंकर!
हर-हर शंकर!!

श्री रामानुजस्वामीजी के गुरु

श्री रामानुज जयंती (२८.०४.२०२०) के अवसर पर...

- श्री अनुज कुमार अगर्वाल
मोबाइल - ८१२३६०५६९४

भगवद रामानुज स्वामीजी के गुरु निम्न प्रकार हुये -

१. श्री यामुनाचार्यजी - श्री यामुनाचार्यजी जिन को आळवंदार स्वामीजी के नाम से भी जाना जाता है, इन की रचना श्री आळवंदार स्तोत्र संप्रदाय का प्राण है। यह स्तोत्र ''स्तोत्ररत्न'' का नाम से प्रसिद्ध है। श्रीरामानुज स्वामीजी इन के दर्शन के लिये श्रीरंगम के लिये प्रस्थान किये, लेकिन, इनके पहुँचने के पहले ही यामुनाचार्य स्वामीजी परमपद के लिये प्रस्थान कर लिये। श्रीरामानुज स्वामीजी को बहुत ही दुःख हुवा। परमपद के समय श्री यामुनाचार्य स्वामीजी की तीन उंगलियाँ मुडी हुई थी। श्रीरामानुजाचार्य ने स्वामीजी के परार्थवेत्ता भाव को जान कर तीन प्रतिज्ञा की -

१. मैं वैष्णवमत का अवलंबन करके अज्ञान मोहित संसारियों को पंच संस्कार संपन्न, द्रवीण वेद पारंगत एवं प्रपत्ति

श्री तिरुमालै आंडान

श्री तिरुकोष्ठियूर नम्बि

श्री आळवार तिरुवरंगत्तु पेरुमाल अरैयर

श्री पेरिय नम्बि

श्री पेरिय तिरुमलै नम्बि

धर्म संलग्न करके उनकी संसार सागर से सदा रक्षा करूँगा।

२. मैं संपूर्ण उपनिषद्तत्त्वों का संग्रह करके **श्रीभाष्य** की रचना करूँगा।

३. संसारियों पर कृपा करके जीव, ईश्वर इत्यादि के स्वभाव, इनके द्वारा परमपद प्राप्ति के उपाय, पुराण रत्न (विष्णु पुराण) के रचयिता श्रीपराशर के निष्क्रियार्थ किसी महाप्राग्य श्रीवैष्णव का विष्णु पुराण के नाम पर नाम (श्री विष्णुचित्त स्वामी) रखूँगा।

उक्त तीनों वचनों की घोषणा होते ही यामुनाचार्य की तीनों उँगलिया सिधी हो गई। श्रीरामानुज स्वामीजी श्री यामुनाचार्य स्वामीजी को अपना मानसिक गुरु मानते थे। श्रीविशिष्टाद्वैत सिद्धान्त का प्रतिपादन इन्ही के कारण प्रस्थापित हुवा।

२. श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी - श्रीरामानुज स्वामीजी अपने माता-पिता के परमपद के बाद श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी के साथ अपना समय व्यतीत करते थे। श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी नित्य श्रीवरदराज भगवान की पंखी सेवा करते थे। उस समय भगवान उन से वार्तापाल भी करते थे। श्रीरामानुज स्वामीजी के कुछ संदेह थे, उनका निवारण भगवान से वार्ता करके कांचीपूर्ण स्वामीजी ने किया।

१. मैं जगतकारण प्रकृति का कारण परब्रह्म हूँ।

२. जीव और ईश्वर का भेद स्वतःसिद्ध है।

३. मुमुक्षु जीवों को भगवान के चरण कमलों में आत्म-समर्पण करना ही मुक्ति का कारण है।

४. मेरे भक्त अंतिम समय में मेरा स्मरण न भी करे, तथापि उन की मुक्ति अवश्यंभावी है।

५. देह-त्याग करने पर हमारे भक्तगण परमपद प्राप्त करते है।

६. सर्वगुण संपन्न महात्मा श्री महापूर्ण का आश्रय ग्रहण करो।

इस तरह श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी रामानुज के संदेह को मिटाने सहायक हुए। रामानुजाचार्य स्वामीजी ने श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी को अपना गुरु बनाने के लिये बहुत ही विनंती की। लेकिन, श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी ने मना कर दिया। लेकिन, रामानुजाचार्य स्वामीजी ने उन को अपना बचपन की शिक्षा के लिये गुरु ही माना।

३. श्री महापूर्ण स्वामीजी - श्रीरामानुज स्वामीजी श्रीवरदराज भगवान की आज्ञा पाकर श्री महापूर्ण स्वामीजी के पास श्रीरंगम में पंच संस्कारित होने के लिये प्रस्थान किये। श्री महापूर्ण स्वामीजी रास्ते ही में मिल गये। श्रीरामानुज स्वामीजी ने पंच संस्कारित कराने के लिये प्रार्थना की। श्री महापूर्ण स्वामीजी प्रसन्न हो कर समस्त श्रीवैष्णवों के सामने अग्नि स्थापन करके पुरुषसूक्त मूलमंत्र, केशवादि आदि १०८ नामों से सविधि पूजन करके श्रीरामानुज स्वामीजी को **समाश्रित** किया। श्रीरामानुजाचार्य ने महापूर्ण स्वामीजी की सन्निधि में छः मास तक रह कर श्रीवैष्णव संप्रदाय के विविध ग्रंथों, सात्विक पुराणों एवं दिव्यप्रबन्धों का अध्ययन किया।

४. श्री गोष्टीपूर्ण स्वामीजी - सन्यास ग्रहण के बाद श्रीरामानुज स्वामीजी श्रीरंगम मठ के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित हुये। एक दिन श्री महापूर्ण स्वामीजी ने श्रीरामानुज से कहा- यहाँ के कुछ दूर तिरुकोटियुर (गोष्टीपुर) नामक ग्राम में श्री गोष्टीपूर्ण नामक एक परम श्रीवैष्णव विद्वान रहते हैं। उनके पास श्री यामुनाचार्य पदिष्ट रहस्यार्थ विशेष है। आप उनके पास जा कर

रहस्यत्रय का उपदेश ग्रहण करो। गुरु की आज्ञा मानकर श्रीरामानुज स्वामीजी १८ बार श्री गोष्टीपूर्ण स्वामीजी के पास गये। कृपा करके अंतिम बार श्रीस्वामीजी ने रामानुज को मूलमंत्र का अर्थ एवं ध्यान के सहित जप का विधान बतलाया। यह मंत्र परम दुर्लभ हैं, इसलिये इसकी गोपनीयता की सावधानीपूर्वक रक्षा की जाय। यतीराज ने गुरुदेव की बातों को कुछ भी महत्त्व न दे कर गोपुर पर चढकर उपर्युक्त मंत्र का जोर-जोर से उपदेश किया। जिसे ७४ श्रीवैष्णवों ने सुना। इस समाचार को सुनकर श्री गोष्टीपूर्ण स्वामीजी श्रीरामानुजाचार्य को बुलाकर बोले-आपने मेरे गोपनीय मंत्र का साधारण लोगों में प्रकाशन करके गुरुद्रोह किया है। गोष्टीपूर्ण स्वामीजी की वाणी सुनकर श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''गुरुद्रोह करने से नरक ही तो मिलेगा, यदि केवल मेरे नरक जाने से और इस मंत्र की महिमा से अनेक श्रीवैष्णवों को वैकुंठधाम मिल जाय तो मैं अपना सौभाग्य समझूँगा।''

यतीराज के इन भावों को सुनकर श्री गोष्टीपूर्ण स्वामीजी प्रसन्न हुये, और उन्हें ''मन्नाथ'' (मेरे स्वामी) नाम से संबोधित करके हृदय से लगा लिया। और उन सभी श्रीवैष्णवों को आदेश दिया की आप लोग आज से श्रीविशिष्टाद्वैत सिद्धांत को श्रीरामानुज सिद्धांत के नाम से संबोधित करेंगे। श्री गोष्टीपूर्ण स्वामीजी मंत्रोपदेश करके अपने पुत्र श्रीसौम्यनारायण को श्रीरामानुज स्वामीजी से समाश्रित करवाये।

४. श्री मालाधर स्वामीजी - श्री गोष्टीपूर्ण स्वामीजी ने श्रीरामानुज स्वामीजी से श्री यामुनाचार्य स्वामीजी के शिष्य श्री मालाधर स्वामीजी से दिव्यप्रबंध का अध्ययन करने को कहा। गुरु की आज्ञा शीरोधार्य करके मालाधर स्वामीजी से पढने लगे। अध्ययन करते रामानुज स्वामीजी श्लोकों की व्याख्या सटीकपूर्वक करने लगे। यह देखकर श्री मालाधर स्वामीजी अत्यंत प्रसन्न और प्रभावित होकर अपने पुत्र श्रीसुंदरबाहु को उनका शिष्य बनाया।

६. श्री वररंगाचार्य स्वामीजी - श्रीरामानुज स्वामीजी ने श्री यामुनाचार्य स्वामीजी के पुत्र श्री वररंगाचार्य स्वामीजी से **धर्म-रहस्य एवं सहस्रगीति** का अध्ययन करने का निश्चय किया। श्रीरंगनाथ भगवान के समक्ष श्री वररंग स्वामीजी नाच गा कर थक जाते थे। तब श्रीरामानुज स्वामीजी उनके पैर दबाते थे, रात्रि को अपने हाथ से दुध तैयार कर उनको पिलाते थे। इस प्रकार छः महिने बीत जानेपर श्री वररंगाचार्य स्वामीजी ने उन पर कृपा की। उनको **परम पुरुषार्थ** के रहस्य का ज्ञान कराया। अपने छोटे भाई शोटुपूर्ण को श्रीरामानुजाचार्य का शिष्य बनाया।

७. श्री शैलपूर्ण स्वामीजी - श्रीरामानुज स्वामीजी तिरुपति पधारकर श्री शैलपूर्ण स्वामीजी के यहाँ एक वर्ष रहकर **श्रीवाल्मिकि रामायण** का अभ्यास किया। प्रसन्न हो कर अपने शिष्य श्रीगोविंद को श्रीरामानुज स्वामीजी को समर्पित किया।

इस प्रकार श्रीरामानुज स्वामीजी ने अपने गुरु बनाये और उनसे यथोक्त शिक्षा प्राप्त की।

जयति यतिराज फ़णिराज अवतारमणे
प्रबल पाषंड तम हरण भानो
विजयी भव! विजयी भव! विजयी भव!!

भागवत कथा सागर

राजा चित्रकेतु की कथा

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

राजा चित्रकेतु की कथा का वर्णन श्रीमद्भागवतम् के छठे स्कंध में किया गया है। वे सूरसेन नामक देश में राज्य करते थे। अनेकों पत्नियाँ होने पर भी उनकी कोई संतान न थी। दुर्भाग्यवश उनकी सभी पत्नियाँ संतानविहीन थीं। चित्रकेतु संतानविहीनता के दुःख से दुखी थे। एक बार पृथ्वी पर स्वछन्द भ्रमण करते हुए अंगीरा ऋषि उनके यहाँ पहुँचे। चित्रकेतु ने अंगीरा ऋषि का राजसी पर परागत रूप से स्वागत एवं उनकी सेवा की। ऋषि ने उनके विनीत स्वभाव से संतुष्ट होकर कहा ''हे राजन! तुम उदास एवं मानसिक कष्ट से ग्रसित लगते हो। इस चिंता का कारण स्वयं तुम हो या कोई अन्य है? कृपया मुझे विस्तृत रूप से बताइये।'' वास्तव में ऋषि को सब कुछ ज्ञात था लेकिन वे इसे राजा से जानना चाहते थे। तब चित्रकेतु ने भारी मन से कहा ''हे प्रभु! मेरे परिवार का कोई वंशज न होने के कारण मुझे और मेरे पूर्वजों को नरक में जाने से बचा लीजिये। कृपया मुझे एक अच्छे पुत्र की प्राप्ति का वरदान दीजिये।''

अंगीरा ऋषि ने राजा की प्रार्थना स्वीकार करके एक यज्ञ संपन्न किया। तब ऋषि ने मीठे चावल वाला यज्ञ का उच्छिष्ठ चित्रकेतु की पत्नी को दिया। उसका नाम कृतद्युति था। ऋषि ने राजा को आश्वासन दिलाया कि उसे मीठे चावलों की शक्ति से एक पुत्र की प्राप्ति होगी। लेकिन उन्होने चेतावनी दी कि वह पुत्र आनंद एवं कष्ट दोनों का कारण होगा। उचित समय पर मीठे चावलों की शक्ति से

कृतद्युति ने एक सुंदर पुत्र को जन्म दिया। इस अद्भुत् समाचार को पाकर राजा चित्रकेतु अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होने नवजात शिशु के शुद्धिकरण क्रियाओं की संपूर्ण व्यवस्था की और सभी को अनेकों उपहार भेंट किये। उन्हे पुत्र को जन्म देने वाली कृतद्युति के प्रति विशेष प्रेम भी उत्पन्न हो गया। इससे राजा की अन्य पत्नियों को ईर्ष्या होने लगी। साथ ही अन्य पत्नियों के प्रति राजा के स्वभाव में आये बदलाव ने उनकी ईर्ष्या की आग में इंधन का कार्य किया। ईर्ष्या की उस आग ने अन्य पत्नियों का विवेक हर लिया और उन्होने उस नवजात शिशु को विष देकर मार दिया।

लम्बे समय के बाद भी पुत्र के बिस्तर से न उठने पर कृतद्युति परम शोक में डूब गई। उसी बीच जब धाय को ज्ञात हुआ कि राज परिवार के उस बालक की मृत्यु हो चुकी है तो वह जोर-जोर से रोने लगी। धाय का क्रंदन सुनकर कृतद्युति दौड़ कर उस स्थान पर पहुँची जहाँ उसे ज्ञात हुआ कि उसका पुत्र मर चुका है। वह शोकग्रस्त होकर कटे हुए

पेड़ की भाँति मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। संपूर्ण महल स्त्रियों के क्रंदन से भर गया। किसी प्रकार चित्रकेतु तक वह समाचार पहुँचा और परम शोक से ग्रस्त होने के कारण वह गिरता-पड़ता कठिनाई से अत्यन्त पीड़ा में उस स्थान पर पहुँचा। वह एक भी शब्द नहीं बोल पा रहा था और पीड़ा से उसका गला रूँध गया था। राजा एवं रानी की उस शोकाकुल अवस्था को देखकर महल के समस्त वासियों के हृदय को वेदना बढ़ गई।

अंगिरा ऋषि को चित्रकेतु को पहुँची उस महान छति के बारे में ज्ञात होने पर वे तुरंत नारद मुनि के साथ वहाँ गये। वे शोक एवं निराशा के उन छणों में सहायक आध्यात्मिक ज्ञान का उपदेश देने आये थे। उन्होने जीवन के अनेक रहस्यों के बारे में बताकर राजा एवं रानी को शांत किया। उनके शब्दों से राजा चित्रकेतु को कुछ शांति मिली लेकिन महान शोक के कारण वे उन संत पुरुषों को पहचान न सके। नादान व्यक्ति की भाँति राजा ने उनसे पूछा कि वे कहाँ से आये हैं और संकट के समय में दिये संदेश के लिए उनके प्रति आभार प्रकट किया। तब अंगीरा ऋषि ने कहा ''प्रिय चित्रकेतु! मैं उस समय तुम्हारे महल में आया था जब तुम्हें एक पुत्र प्राप्ति की इच्छा थी। उस समय हमने तुम्हें एक सुंदर पुत्र प्राप्त होने का वरदान दिया था। यहाँ नारद मुनि भी आये हैं। हम तुम्हें तुम्हारे मिथ्या-शोक से मुक्त करने के लिए आये हैं। अपनी आत्मा और आत्म-शक्ति को पहचानने का प्रयत्न करो। आत्मा के स्तर पर स्थित होते ही तुम्हे शोक से मुक्ति मिल जायेगी।'' तब नारद मुनि ने उन्हे संकर्षण भगवान के सात दिन में दर्शन दिलाने वाला विशेष मंत्र बताया।

उस विशेष मंत्र का वरदान देने के बाद नारद मुनि ने अपनी योगशक्ति से उस मृत बालक को पुनः जीवित कर दिया। तब वह बालक तुरंत उठकर सबसे बाते करने लगा। बालक ने माता-पिता एवं संबंधियों को एसे महान सत्य का बोध कराया जिससे वे अत्यंत आश्चर्यचकित हो गये। वे सभी जीवन एवं मृत्यु की सच्चाई को समझ गये। उस नित्य सत्य का बोध कराने के बाद वह बालक वापस चला गया। तब राजा और रानी ने उस बालक के साथ अपने संबंध से उत्पन्न स्नेह-बंधन को काट दिया और शोक का परित्याग करके शांत हो गये। उन्होने बालक के शरीर का दाह-संस्कार करके शुद्धिकरण की प्रक्रिया पूर्ण की। तब नारद मुनि एवं अंगिरा ऋषि ने चित्रकेतु को भविष्य के लिए निर्देष दिया और उन्हे आशीर्वाद देकर महल से चले गये। अपने गुरु से प्राप्त मंत्र का सात दिनों तक जप करके चित्रकेतु को विद्याधर लोक का राज्य प्राप्त हुआ। तदनंतर कुछ ही दिनों में मंत्र के प्रभाव से उन्हे भगवान संकर्षण के दर्शन प्राप्त हुए। उस समय भगवान संकर्षण महान संतों से घिरे हुए थे। चित्रकेतु ने भगवान को भक्ति तथा प्रेम-पूर्वक दंडवत प्रणाम करके सुवक्ता की भाँति उनकी स्तुति की।

तब चित्रकेतु विद्याधर लोक का आनंद लेने लगे। एक बार वे अपने विमान में एसे स्थान के ऊपर से जा रहे थे जहाँ भगवान शिव अपनी गोद में पार्वती के साथ बैठे थे। शिवजी के अनेक अनुयायी उनके आस-पास बैठे थे। भगवान शिव सभी से बातें करते हुए पार्वती का आलिंगन कर रहे थे। चित्रकेतु शिवजी को उस अवस्था में देखकर उन पर हँसा। चित्रकेतु के वचन सुनकर शिवजी तनिक भी क्रुद्ध नहीं हुए, लेकिन पार्वती ने उन्हे एक असुर बनने का शाप दे दिया। शक्तिशाली शाप के कारण चित्रकेतु त्वष्टा के यज्ञ से उत्पन्न होकर वृत्रासुर बन गया। वृत्रासुर ने इंद्र के हाँथों अपनी मृत्यु को आमंत्रित करके आध्यात्मिक जगत में जाने के लिए अपना शरीर त्याग दिया। इस कथा को पूर्ण विश्वास के साथ सुनने वाला व्यक्ति सभी भौतिक बंधनों से मुक्त हो जाता है। प्रातःकाल में भगवान हरि का ध्यान करते समय इस कथा का पाठ करने वाला व्यक्ति आसानी से भगवान के चिर-धाम में पहुँच सकता है।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

कार्वेटिनगरम्

श्री वेणुगोपालस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

दि. १५-०५-२०२० से दि. २३-०५-२०२० तक

१५-०५-२०२०
शुक्रवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

१६-०५-२०२०
शनिवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

१७-०५-२०२०
रविवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

१८-०५-२०२०
सोमवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

१९-०५-२०२०
मंगलवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

२०-०५-२०२०
बुधवार
दिन - हनुमन्तवाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

२१-०५-२०२०
गुरुवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

२२-०५-२०२०
शुक्रवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

२३-०५-२०२०
शनिवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

२४-०५-२०२०
रविवार
दिन - पुष्पयाग महोत्सव

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

दि. १४-०२-२०२० से दि. २३-०२-२०२० तक संपन्न

तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सवों की

दृश्यमालिका और कलाबृंद

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

दि. १४-०२-२०२० से दि. २२-०२-२०२० तक संपन्न

श्रीनिवासमंगापुरम् श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सवों की

दृश्यमालिका और कलाबृंद

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

दि. ०५-०३-२०२० से दि. ०९-०३-२०२० तक संपन्न
तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी के
प्लवोत्सवों की दृश्यमालिका

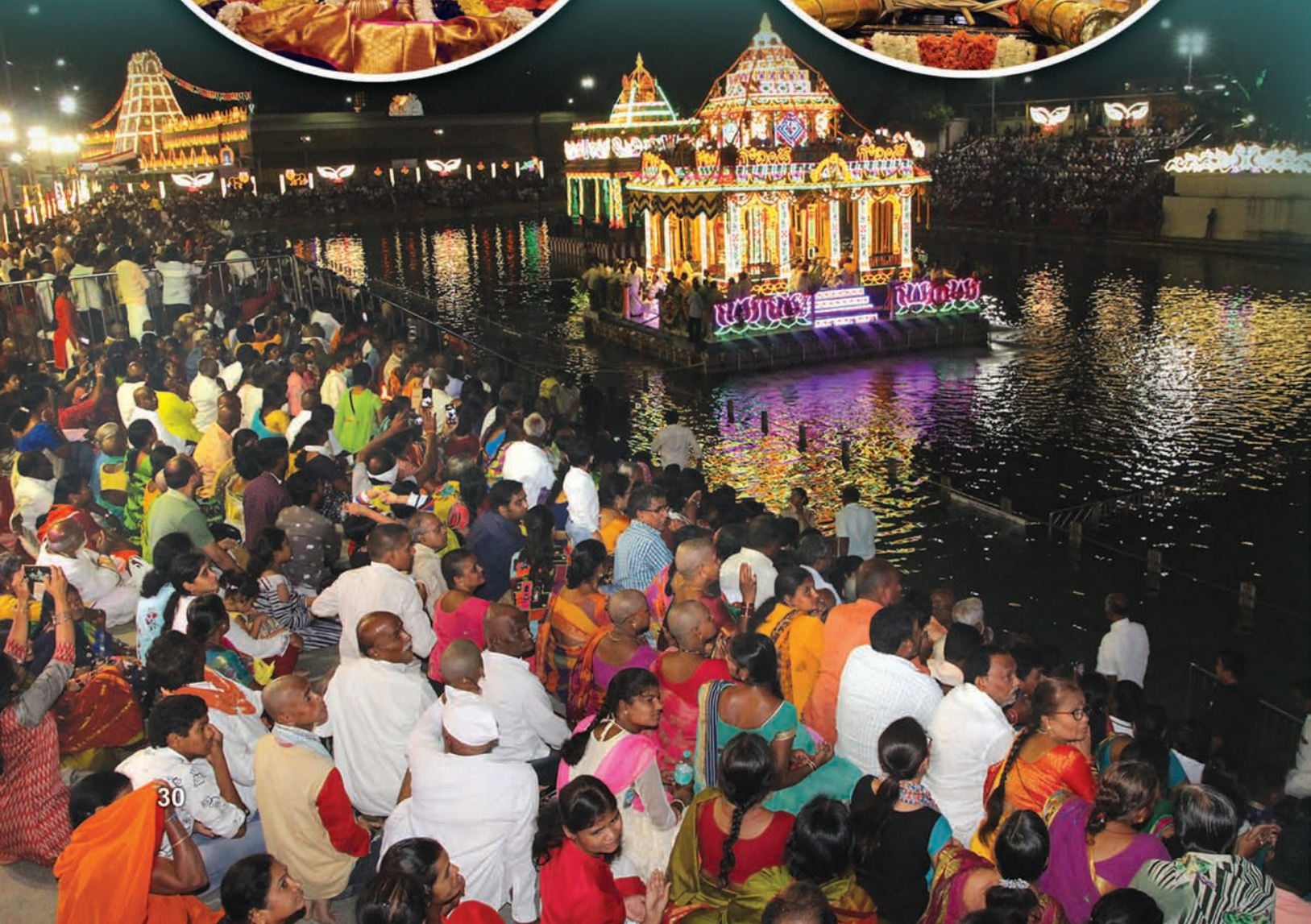

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

९६

श्रीमते रामानुजाय नमः

उस जिज्ञासु महात्मा का विनय भरा हुआ अत्यन्त नम्रता पूर्वक वचन श्रवण करके सब शास्त्रों के सारांश भाग को भली भाँति जानने वाले स्वामी रंगनारायणजी बड़ी प्रसन्नता पूर्वक आज्ञा दिये कि महात्मन्! आप बिल्कुल संकोच न करके जो कुछ पूछना चाहते हों अवश्य कृपा करके पूछिये। हाथ जोड़ कर गद्गद होकर बड़ी प्रसन्नता पूर्वक वह जिज्ञासु महात्मा कहे कि कृपा निधान! सरकार की तरफ से यही बारम्बार आज्ञा हो रही है कि संशय जो है सो महान् शत्रु है। इससे इसको जड़ मूल से छोड देना चाहिए और भगवान में तथा परमपद में पूर्ण विश्वास रखना चाहिए। जिसको विश्वास नहीं होगा उसको कोई भी फल नहीं प्राप्त होगा। परन्तु भगवान हैं और परमपद हैं ये दोनों अदृश्य विषय हैं। न तो इन्हें कभी देखा ही है न इनसे कभी कुछ व्यवहार ही हुआ है। तो इन अदृश्य विषयों में जिसको हमने कभी देखा ही नहीं है, सरकार! उसमें एका एक कैसे विश्वास हो जायेगा। इस प्रकार उस जिज्ञासु महात्मा का वचन सुनकर श्री रंगनारायण गुरु बोले कि अच्छी तरह समझा कर इस विषय को मैं कहता हूँ आप सावधान चित्त से श्रवण करिये। शास्त्रों में प्रमाण चार प्रकार के हैं। एक प्रत्यक्ष, (प्रत्यक्ष का ज्ञान ज्ञानेन्द्रियों से होता है, जैसे रूप का नेत्र से, शब्द का कान से, गन्ध का नाशिका से, स्पर्श का त्वचा से, रस का जिह्वा से) दूसरा अनुमान, तीसरा ऐतिह्य, चौथा शास्त्र। चारों का न्यारे-न्यारे विवरण करके समझा रहा हूँ। प्रत्यक्ष प्रमाण उसको कहते हैं कि आप हमको सामने देख रहे हैं और हम आप को। इस विषय में न हम को कुछ शंका है न आप को। जो नेत्र के द्वारा प्रत्यक्ष देख रहे हैं यही नेत्र के द्वारा रूप का प्रत्यक्ष प्रमाण कहलाता है। परन्तु यह प्रत्यक्ष प्रमाण भी कभी-कभी काम नहीं देता है। जैसे किसी को दिशाभ्रम हो जाने पर सूर्य पश्चिम में उगे मालूम पड़ते हैं। यद्यपि दिशाभ्रम वाले को सूर्य पश्चिम में ही उगे मालूम पड़ रहे हैं उसके लिये प्रत्यक्ष पश्चिम में ही उगना है, परन्तु यथार्थ में यह है नहीं। उस वक्त दूसरे के कहने से यह कबूल करना पड़ेगा कि वास्तव में यह पूर्व दिशा है। हमें भ्रम से पश्चिम मालूम पड़ रहा है।

महात्माजी! यहाँ पर अपना प्रत्यक्ष प्रमाण काम नहीं दिया। दूसरे का ही कहा हुआ अर्थात् शब्द प्रमाण काम दिया। अब जो कहते हैं कि जो आँखों से देखूँगा उसीको सत्य मानूँगा, दूसरे के कहे हुए पर देखे बिना विश्वास कैसे करूँ। उसका यहाँ खण्डन हो गया यानी हर एक जगह प्रत्यक्ष प्रमाण काम नहीं दे सकता। बहुत सी जगह चाहे अपने को जचे अथवा न जचे परन्तु दूसरे से कही हुई ही बात पर परवश विश्वास करना पड़ता है। दूसरा प्रमाण अनुमान है। अनुमान किस को कहते हैं इसको भी

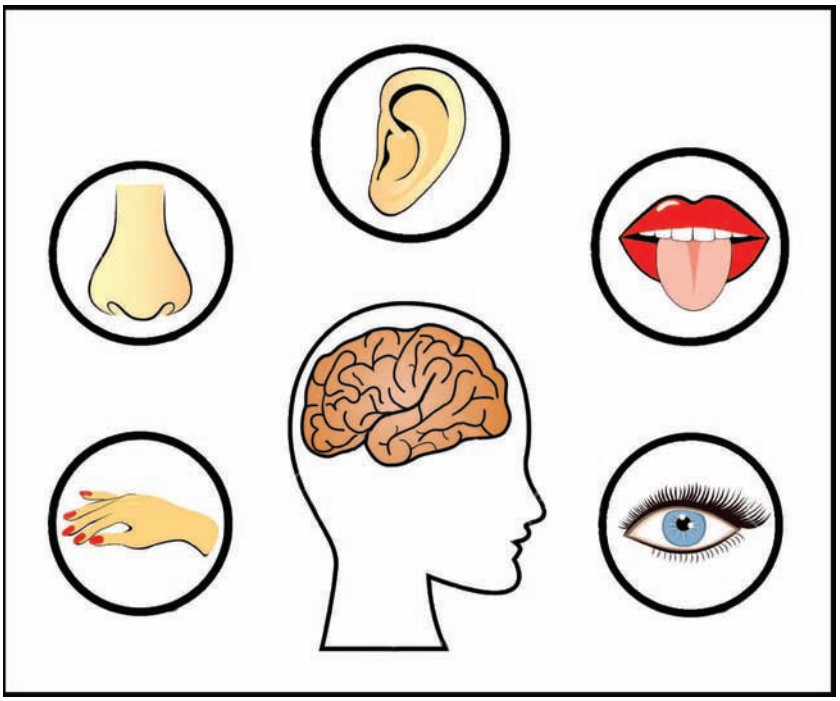

खुलासा बतला रहा हूँ, ध्यान देकर सुनिए। घड़े को देख कर घड़ा बनाने वाले का अनुमान होता है वस्त्र देख कर उसके रचयिता को मानते हैं। उसी प्रकार जगत देख कर जगत का रचयिता भी कोई है, यह अनुमान करना पड़ता है। यहाँ भी प्रत्यक्ष प्रमाण से काम नहीं चला तो अनुमान की आवश्यकता पड़ी, और दूर कहीं धुआँ दीख रहा है उसके जरिये यह अनुमान कर सकते हैं कि वहाँ आग जरूर है। यद्यपि दूर के कारण अग्नि दीख नहीं रहा है। परन्तु धुऐं के जरिये वहाँ अग्नि का रहना निश्चित है। और इस बात को सब मानते हैं जैसे इसी का नाम अनुमान प्रमाण है। जिस जगह प्रत्यक्ष और अनुमान यह दोनों प्रमाण काम नहीं देते हैं वहाँ ऐतिह्य प्रमाण काम देता है। ऐतिह्य किसको कहते हैं इसको आगे बताता हूँ और पीछे भी सूर्य के दृष्टान्त से प्रसंग वश कह चुका हूँ। एक ने एक से पूछा कि तुम्हारी जाति क्या है। वह बोला कि ब्राह्मण! फिर पूछा तुम्हारे पिता का नाम क्या है? उसने कहा- लक्ष्मण पाठक। फिर पूछा गोत्र क्या है? उसने बताया गौतम। ये तीनों विषय उस मनुष्य के आँख से देखे हुए नहीं हैं न इनको कोई आँख से देख सकता है। इन तीनों को माता ने ही बताया है। यदि कोई हठ करे कि मैं प्रत्यक्ष देखे बिना इन्हें मानने को तैयार नहीं हूँ, तो परवश कबूल करने के अतिरिक्त इनको प्रत्यक्ष करने का कोई उपाय ही नहीं है। यहाँ ऐतिह्य प्रमाण के सिवाय प्रत्यक्ष और अनुमान से काम नहीं चल सकता। क्योंकि पिता का निश्चय देख कर कोई कर ही नहीं सकता। यहाँ परवश माता का कहना मानना पड़ेगा। गोत्र, पिता तथा जाति ये तीनों अदृष्ट विषय हैं, परोक्ष की बाते हैं और सुने ही हुए हैं, परन्तु इन पर किसी को सन्देह नहीं होता है, पूर्ण विश्वास करके इससे जगत में काम ले रहे हैं। इन तीनों बातों में जिसको सन्देह रहेगा उसका जगत में व्यवहार सिद्ध न होगा। वह लौकिक कार्य नहीं कर सकता है और न शास्त्रीय ही। जैसे एक बिगडे दिमाग का आदमी था। ''जो आँख से देखूँगा वही मानूँगा, सुना हुआ न मानूँगा'' उसका भी यही हठ था। किसी कार्यवश किसी मकान की रजिष्टरी कराने को उसे कचहरी में जाने का मौका पड़ा।

रजिष्ट्रार ने पूछा तुम्हारी जाति क्या है? वह बोला मैं निश्चय नहीं कह सकता। इतना सुन कर फिर रजिष्ट्रार ने पूछा- अच्छा तुम्हारे बाप का क्या नाम है? वह बोला यह भी नहीं कह सकता, क्योंकि मैं खुद तो देखा नहीं कि मेरा पिता कौन है और देखे बिना दूसरे की कही हुई बात पर हमें विश्वास नहीं है। इतना सुन कर कचहरी वाले सब हँस पड़े। फिर रजिष्ट्रार पूछे कि जब तुम्हें अपने बाप और जाति पर विश्वास ही नहीं है तो तुम्हारे नाम रजिष्ट्री कैसे हो सकती है।

क्योंजी! कोई सिपाही है, इसका दिमाग ठीक नहीं है इसको बाहर करो। क्रोध में भर कर रजिष्ट्रार ने उसका स्टाम्प फेंक कर उसको रजिष्ट्री घर से बाहर करा दिया। वह बिगड़े दिमाग वाला मनुष्य हाथ जोड़ कर बोला कि माफ करिये सरकार! दाखिल खारिज का काम है रजिष्ट्री होना आवश्यक है मेहरवानी करके जरूर इसका रजिष्ट्री कर दीजिए। इतना सुन कर क्रोध में आकर फिर रजिष्ट्रार बोले कि अरे बेवकूफ जब तुम्हें अपने बाप ही का निश्चय नहीं है तो फिर रजिष्ट्री कैसे करूँ? इसमें तो जाति और बाप का नाम पहिले ही दर्ज करना होता है। यहाँ से तुम चले जावो। अगर फिर तुम्हें कचहरी में देखा तो जेल भेजवा दूंगा। श्री रंगनारायण गुरु कहते हैं कि कहिये महात्मा लक्ष्मी प्रपन्नजी! उस बिगड़े दिमाग वाले मनुष्य का यानी उस प्रत्यक्षवादी का व्यवहार सिद्ध नहीं हुआ। कचहरी से निकाल कर सदा के लिये बाहर कर दिया गया। एक दिन उसी आदमी के यहाँ श्राद्ध पड़ा, हजारों रुपये की सामग्री इकट्ठी की गई। यह बिगड़े दिमाग वाला कर्म करने को बैठा। कर्म कराने के लिए जो कर्म कांडी विद्वान् आये थे, बोले कि क्यों भाई! तुम्हें संकल्प बोलना आता है, वह बोला-नहीं। पंडितजी बोले अच्छा, सुपारी, पसा, अक्षत, जल हाथ में लो और अपना गोत्र बोलो। वह बोला जब मैं अपने गोत्र वाले को देखा ही नहीं तो कैसे गोत्र बोलूँ। पंडितजी ने कहा अच्छा अपने बाप का नाम बोलो-वह बोला, हमें अपने बाप का भी निश्चय नहीं है। पंडितजी फिर बोले अच्छा अपने नाम के पीछे अपनी जाति बोलो-वह बोला इसमें भी हमें भ्रम है। इस प्रकार उन्मादी के समान उसको बोलते देख कर पंडितजी हँस कर बोले - तुम्हारे बड़ों ने क्या तुम्हें नहीं बताया है कि तुम्हारा फलां गोत्र, जाति इत्यादि है? कर्म कांडीजी की बात सुन कर वह भ्रमिष्ट बोला कि बड़ों ने बहुत कुछ बताया है, परन्तु जब मैं आँखों से देखा ही नहीं तो कैसे मानूँ। इतना सुन कर कर्मकांडी उसको बहुत डाँटे और बोले कि न जाने तुम्हारा दिमाग सारी दुनिया से न्यारा क्यों हो गया है। जब सारा जगत प्रत्यक्ष के अतिरिक्त परोक्ष को मानता नहीं तब तो ऐसा करना तुम्हारा भी वाजिब था। परंतु जो बात अपने अधिकार से बाहर की है उसका तो बड़ों के मुख से सुन कर ही विश्वास करना पड़ता है। इतना उनके समझाने पर भी जब वह नहीं माना तो कर्मकांडी विद्वान् क्रोध में आकर वहाँ से जाने को तैयार हो गये। फिर वह प्रत्यक्षवादी बोला कि महाराज! माफ करिये। इस शास्त्रीय कर्म को पूरा करा कर फिर जाइये। पंडितजी बोले कि संकल्प के बिना कर्मकांड कराने की पद्धति नहीं है और संकल्प गोत्र, जाति, नाम के बिना होता नहीं है, और गोत्र, पिता, जाति में तुम्हारा विश्वास नहीं है। अतः शास्त्रीय कर्म होगा कैसे? मैं अपने घर को जाता हूँ। तेरे ऐसे मूर्ख के साथ बिबाद करने से हमारा भी समय नष्ट हुआ। चाहे तुम कर्म कांड करो चाहे भाड़ में पड़ो। इतना कह वह कर्मकांडी जी वहाँ से चले गये। उनके साथ बाकी ब्राह्मण मंडली जो आई थी वह भी चली गयी। जाती हुई उस विप्र मंडली को वह रोका कि महाराज भोजन करके आप लोग जाना। वे क्रोध में आकर बोले कि जिसको अपने गोत्र, बाप, जाति का निश्चत नहीं है उसके यहाँ हम कैसे भोजन करें? इतना कह कर वे सब भी चले गये। उसका सब कर्मकांड हंडभंड हो गया। गांव वाले उस प्रत्यक्षवादी को जाति-वर्ग से अलग कर दिये। श्री रंगनारायण गुरु कहते हैं कि देखिये महात्माजी! उस पुरुष का शास्त्रीय कर्म भी बिगड़ गया।

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

कूरुम् शमयंग ळारुम् कुलैय, कुवलयत्ते
मारन् पणित्त मरै युणर्न्दोनै, मदियिलियेन्
तेरुम्बडि येन्मनम् पुहुन्दानै तिशैयनैत्तुम्
एरुंगणुनै, इरामानुजनै यिरैञ्जिनमे ॥४६॥

षड् दर्शनकर्शनाय शठकोपमुनींद्रानुगृहीतां द्रमिडोपनिषदं सम्यग्विजानंतम्, अविवेकिनो ममापि हृदयं प्रविश्य तत्रत्यकालुष्यविधूननेन प्रसादातिशयं प्रसूतवंतम् दिगंतविसृत्वरयशसं च भगवंतं रामानुजमाशिश्रियम्॥

अपनी इच्छा के अनुसार बकनेवाले षड्दर्शनों के निरासार्थ इस भूतलपर श्रीशठकोपसूरी से अनुगृहीत द्रमिडोपनिषद के पूर्णज्ञाता, मुझ ज्ञानहीन का भी उद्धार करते हुए मेरे हृदय में नित्यनिवास करनेवाले और दिगंतविश्रांत दिव्ययशवाले श्रीरामानुज स्वामीजी को हम नमस्कार करेंगे।

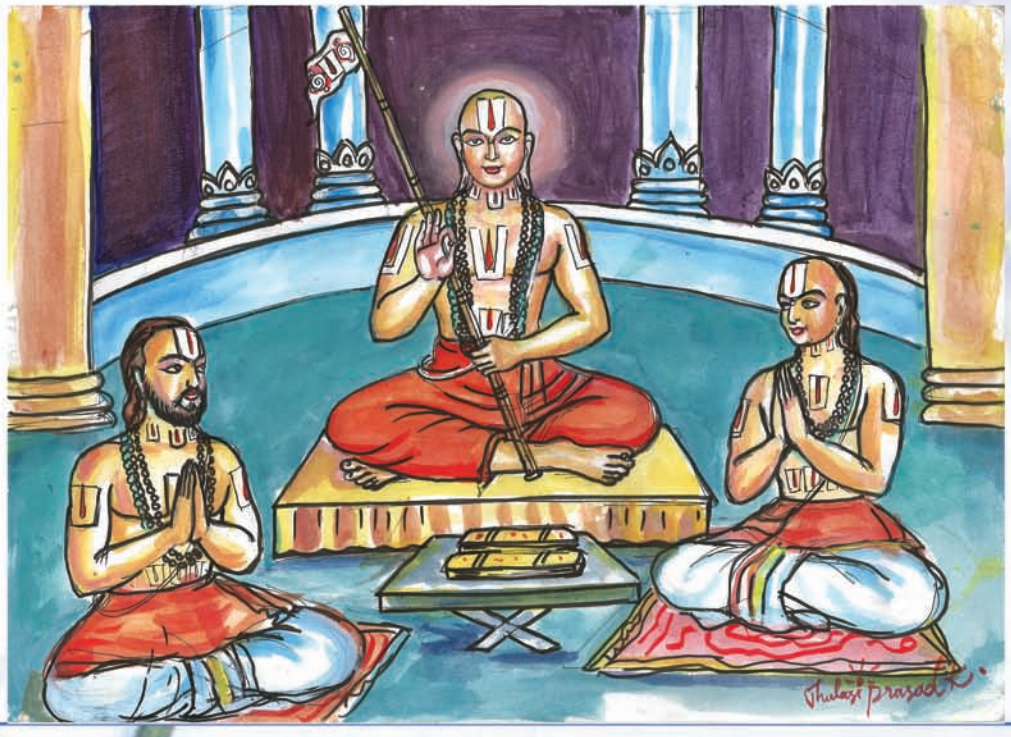

युवता

भगवद्गीता और नौजवान

स्वयं तुम अपने सुखों एवं दुःखों के उत्तरदायी हो!

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

इस जगत में किसी का जीवन आनंदमय है तो किसी का कष्टमय। कुछ लोग सदैव सफलता प्राप्त करते हैं तो कुछ असफलताओं की श्रृंखला से संघर्ष करते दिखाई देते हैं। कुछ ९० वर्ष की आयु में भी आसानी से पर्वतारोहण में सफल होते देखे जाते हैं तो कुछ ४० वर्ष की कम आयु में ही रोगग्रस्त हो जाते हैं। ऐसा क्यों है? कुछ लोग ऐसी असामान्य परिस्थितियों के लिए भगवान को दोषी ठहराते हैं। वे किसी नये भगवान को पूजने लगते हैं या नास्तिक हो जाते हैं या फिर कुछ विचित्र तपस्या करने लगते हैं। यह जानना आवश्यक है कि मनुष्यों के जीवन में सुखों एवं दुःखों का वास्तविक कारण क्या है? शिक्षा, नौकरी, भविष्य, आनंदमय जीवन एवं प्रतिष्ठा प्राप्ति की चिन्तायें सामान्यतः लोगों को व्यथित करती हैं। कुछ व्यक्ति इन उपलब्धियों को सरलतापूर्वक प्राप्त कर लेते हैं लेकिन अन्य इन वाँछित उपलब्धियों से वंचित रह जाते हैं। इन आवश्यक उपलब्धियों के प्राप्त न होने पर नौजवान अनेक असामाजिक कार्यों की ओर झुकते हैं जिससे उनका जीवन और अधिक भयावह एवं दुःखपूर्ण बन जाता है।

चलो देखते हैं कि भगवद्गीता से मस्तिष्क को हिला देने वाले इस प्रश्न का क्या उत्तर मिलता है।

''समस्त भौतिक कारणों एवं परिणामों का कारण प्रकृति है तथा इस संसार में सुख-दुःख के भोगों का कारण जीव है।'' (भगवद्गीता १३.२१)

हजारों वर्ष पूर्व कहे भगवद्गीता के वचनों से प्राप्त संदेश के अनुसार एक व्यक्ति अपनी प्रसन्नता या अपने दुःखों का कारण स्वयं ही होता है। किसी मनुष्य या नौजवान को जब यह ज्ञात होता है कि उसके जीवन में घटित होने वाली सभी घटनाओं का कारण स्वयं वही है तब उसके जीवन में उन्नति की ओर ले जाने वाला एक महान बदलाव आता है। एसे महान परिवर्तन को लाना ही भगवद्गीता का उद्देश्य है। किसी का प्रश्न हो सकता है कि ''हमने सुना है कि पूर्व कर्मों का फल ही वर्तमान दुःखों का कारण है। इसे कैसे समझा जाये? हमने जान-

बूझ कर तो पाप नहीं किया। फिर ये कष्ट हमारा पीछा क्यों नहीं छोड़ते? हम समस्याओं से क्यों घिरे हुए हैं? अच्छे व्यक्तियों के साथ ही बुरा क्यों होता है? सभी पापी लोग तो सुखी दिखाई देते हैं।'' गीता के ज्ञान का अभाव ही ऐसे कथनों का कारण है। गीता ज्ञान प्राप्त होने पर कोई भी ऐसा नहीं बोलेगा।

एक जिज्ञासु व्यक्ति का प्रश्न हो सकता है ''क्या इसका अर्थ है कि हम सभी कष्टों से छुटकारा पाकर निरंतर आनंदमय जीवन की अवस्था को प्राप्त कर सकते हैं?'' इसका स्पष्ट उत्तर है ''हाँ, मनुष्य जीवन का उद्देश्य यही है और भगवद्गीता से इस लक्ष्य को प्राप्त करने का पूर्ण निर्देश प्राप्त होता है।'' मनुष्यों का दूषित मन ही उनके दुःखों का कारण तथा उनके दैवी गुण ही सुखों एवं आनंद का कारण हैं। मन स्वच्छ एवं पवित्र होना चाहिए तथा जीवन का लक्ष्य ऊँची श्रेणी का होना चाहिए। तब जीवन आनंद के सागर की भाँति बन जाता है। मन दूषित एवं जीवन लक्ष्यहीन होने पर जीवन दुःखों का सागर बन जाता है। मन की स्वच्छता बनाये रखना तथा जीवन के उच्च लक्ष्य को चुनना वास्तव में हमारा उत्तरदायित्व है। यह दूसरों का कार्य नहीं है। इन दो आवश्यकताओं की पूर्ति होने पर आनंदमय जगत का अद्भुत् राजसी मार्ग खुल जाता है। किसी का मूल प्रश्न हो सकता है ''मन को स्वच्छ एवं पवित्र रखने का अर्थ क्या है?'' किसी व्यक्ति में व्देष, ईर्ष्या एवं क्रोध की अनुपस्थिति ही मन की स्वच्छता एवं पवित्रता कहलाती है। राजकुमार ध्रुव को उनकी सौतेली माँ ने अपमानित करके पिता की गोद से नीचे उतार दिया था। तुरंत ही ध्रुव ने अपने पिता की गोद में बैठने की अपेक्षा बहुत बड़े लक्ष्य को प्राप्त करने का निश्चय किया। उन्होने निश्चित किया कि वे अपने पिता, दादा एवं पर-दादा से भी श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करेंगे। अप्रत्याशित अपमान उनके लिए अद्भुत लक्ष्य को चुनने का कारण बना, लेकिन लक्ष्य-प्राप्ति के लिए वह पर्याप्त न था। उनकी माता सुनिति ने उन्हे क्रोध-रहित होने का सुझाव देते हुए कहा ''ध्रुव, जिन्होने तुम्हारा अपमान किया है उनके किसी अनिष्ट की इच्छा न करना।'' इस प्रकार उन्होने ध्रुव को मन से द्वेष, ईर्ष्या एवं क्रोध निकालने का अद्भुत् संदेश दिया। माता के संदेश को अपनाकर ध्रुव अपनी सौतेली माँ एवं सौतेले भाई के प्रति किसी प्रकार की द्वेष, ईर्ष्या एवं क्रोध की भावना न रखते हुए एक सर्वोच्च लक्ष्य के साथ वन में पहुँचे। उन्होने परम पुरुषोत्तम भगवान के दर्शन प्राप्त करने के लिए नारद मुनि के निर्देशानुसार कठोर तपस्या की। अन्त में उन्हे अपने लक्ष्य की प्राप्ति हुई और वे ध्रुव तारा बनकर सुप्रसिद्ध हो गये। यही है जीवन में सफलता का रहस्य।

'मानव सेवा ही... माधव सेवा'

आर्ष धर्म में बताया गया है।
सह प्राणियों को किसी भी तरह रक्षा की
जाय, तो अनंत पुण्यफल हमें और हमारे परिवार को
मिलेगा। कलियुग वैकुण्ठ के भगवान का
आवास स्थान तिरुमल में रक्तदान
करना परम पवित्र कार्य है।
आपके रक्त से अन्य व्यक्ति का प्राण बचता है।

तिरुमल में रक्तदान कीजिए।

तिरुमल अश्विनी अस्पताल में प्रतिदिन सुबह 8 बजे से
लेकर दोपहर 12 बजे के अंदर
कोई भी रक्तदान कर सकता है।

दूरभाष - 0877-2263601

आइये... रक्तदान कीजिए!
संकटग्रस्त व्यक्ति को सहायता कीजिए!!

श्री प्रपन्नामृतम्

(११वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

(गतांक से)

श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी से श्रीरामानुजाचार्य का पंचसंस्कार ग्रहण

यतीन्द्र श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के परंधाम पधार जाने के बाद श्रीरंगम क्षेत्र के समस्त श्रीवैष्णववृन्द भगवद्भागवदाराधन में निष्ठित रहकर भी श्रीयामुनाचार्याजी का अभाव अनुभव किया करते थे। एक दिन प्रसंगानुकूल श्रीरामानुजाचार्य को याद करते हुए उन लोगों ने निर्णय किया कि श्रीवैष्णवरक्षक श्रीरामानुजाचार्य कांचीपुरी में रहते हैं, उन्हें ही श्रीरंगम लाया जाय। वे आचार्यवर्य श्रीयामुनाचार्य के ही सदृश शीलादि गुणों से संपन्न, प्रह्लाद के समान भगवद्भक्त, पृथ्वी की तरह क्षमाशील सर्वशास्त्रज्ञ एवं अखिललोकरक्षणक्षम हैं। अतः श्रीमहापूर्णाचार्यजी ने कांची जाकर उन्हें पंचसंस्कार संस्कृत करके एवं श्रीविष्णुचित्त आदि सूरियों के द्वारा विरचित ग्रन्थों का अध्ययन कराकर किसी तरह श्रीरंगम लाये।

उपर्युक्त पारित प्रस्तावानुसार श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी ने श्रीरंगनाथ भगवान को साष्टांगप्रणाम प्रतिपादन करके तथा उनसे आज्ञा लेकर कांची की ओर प्रयाण किया। श्रीरंगम के ही रास्ते में ग्रामों, वनों, प्रदेशों एवं पर्वतों को पार करके सपरिवार ब्राह्मभूमि कांची प्रदेश में आते हुए श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी का दर्शन पाकर श्रीवैष्णवाग्रेसर श्रीरामानुजाचार्य सन्निकट में आकर सविनय साष्टांग प्रणिपात पुरस्सर बोले- ''पवित्रात्मन् सकल पुरुषार्थ प्रदायिनी श्रीरंगनाथ भगवान की नगरी छोड़कर श्रीमान् कहाँ सपरिवार जा रहे हैं?'' सविस्तार अपना उद्देश्य बतलाते हुए श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी ने पूछा कि वे इस समय कहाँ जा रहे थे। अपने उद्देश्य की सद्यःसिद्धि देखकर श्रीरामानुजाचार्य बोले कि- ''भगवन्! मैं अपार संसार सागर में डूब रहा था। श्रीमान् मुझे पंचसंस्कारों से संस्कृत करके मेरी रक्षा करें।'' श्रीरामानुजाचार्यजी की प्रार्थना से प्रसन्न श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी बोले कि वे उनका पंचसंस्कार श्रीवरदराज भगवान की सन्निधि में ही करेंगे। अतः वे लोग उस दिन सत्यव्रत क्षेत्र में निवास करके दूसरे दिन कांची चलेंगे। आचार्य श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी की

बातों को सुनकर श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''श्रीमान्! चंचल जीवन का कोई विश्वास नहीं। श्रीमान् को याद होगा कि हम दोनों श्रीयामुनाचार्य स्वामीजी के दर्शनार्थ श्रीरंगम गये थे और मुझे निराशा ही हाथ लगी। काल किसी पर कृपा नहीं करता। सोते, खाते, चलते, बालक, युवा, वृद्ध, नर-नारी कालकलवित होते देखे गये हैं। अतः उज्जीवनेक्षु शुभ कार्यों में देर नहीं करते। फिर श्रीमान् इस काम को दूसरे दिन के लिए क्यों छोड़ते हैं।''

श्रीरामानुजाचार्य का आग्रह देखकर गुरुवर्य श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी ने स्वयं पंचसंस्कारोचित सामग्री एकत्रित करते हुए उन्हें आज्ञा दी कि वे स्वच्छ जल वाले तालाब में स्नान करके दिव्य विग्रहमय सकल कल्याणगुणगणाकर भगवान विष्णु के मंदिर में पधारें। वहाँ उन्होंने समस्त श्रीवैष्णवों के सामने अग्नि स्थापन करके पुरुषसूक्त मूलमंत्र, केशवादि श्रीवैष्णवों के १०८ नामों से घी और हविष्य की आहुति देकर भगवान के आयुध शंख-चक्र का सविधि पूजन किया। तदनंतर ब्राह्मणवरेण्य श्रीरामानुजाचार्य स्वामी के भुज-मूलों को कोदंडपाणि भगवान रामचंद्र के सन्निकट में सुतप्त शंख-चक्रों से चिह्नित करके पंचसंस्कार कृत्य को परिपूर्ण किया। इसके बाद भगवान रामानुजाचार्य ने प्रसन्न मन से श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी पुरस्सर व समस्त वैष्णववृंदों की पूजा की।

श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी बोले- ''वैष्णवोत्तम श्रीरामानुजाचार्य! अब अखिल वैष्णवों के रक्षक आप ही हैं। प्रच्छन्न बौद्धादि अनेक पाखंडवादियों को निराश करके श्रीमन्नारायण को अशेषशेषी सिद्ध करने में आप समर्थ हैं।'' इसके बाद अपने आचार्य महापूर्णाचार्य स्वामी के साथ आकर श्रीरामानुजाचार्य ने भगवान वरदराज को साष्टांग प्रणिपात निवेदन करके श्रीशठकोप, तुलसी, प्रसाद ग्रहण करके श्रीकांचीपूर्ण स्वामी से अपने समाश्रित होने तथा श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी ने कांची पधारने का समाचार भी सुनाया।

श्रीरामानुजाचार्य ने श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी की ही सन्निधि में छः मास तक रहकर श्रीवैष्णव संप्रदाय के विविध ग्रंथों, सात्विक पुराणों एवं दिव्यप्रबंधों का अध्ययन किया। श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी भी शिष्य श्रीरामानुजाचार्य की जिज्ञासा देखकर सांप्रदायिक ग्रंथों का रहस्य समझाते हुए कांचीपुरी में निवास करने लगे।

।। श्रीप्रपन्नामृत का ११वाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

(गतांक से)

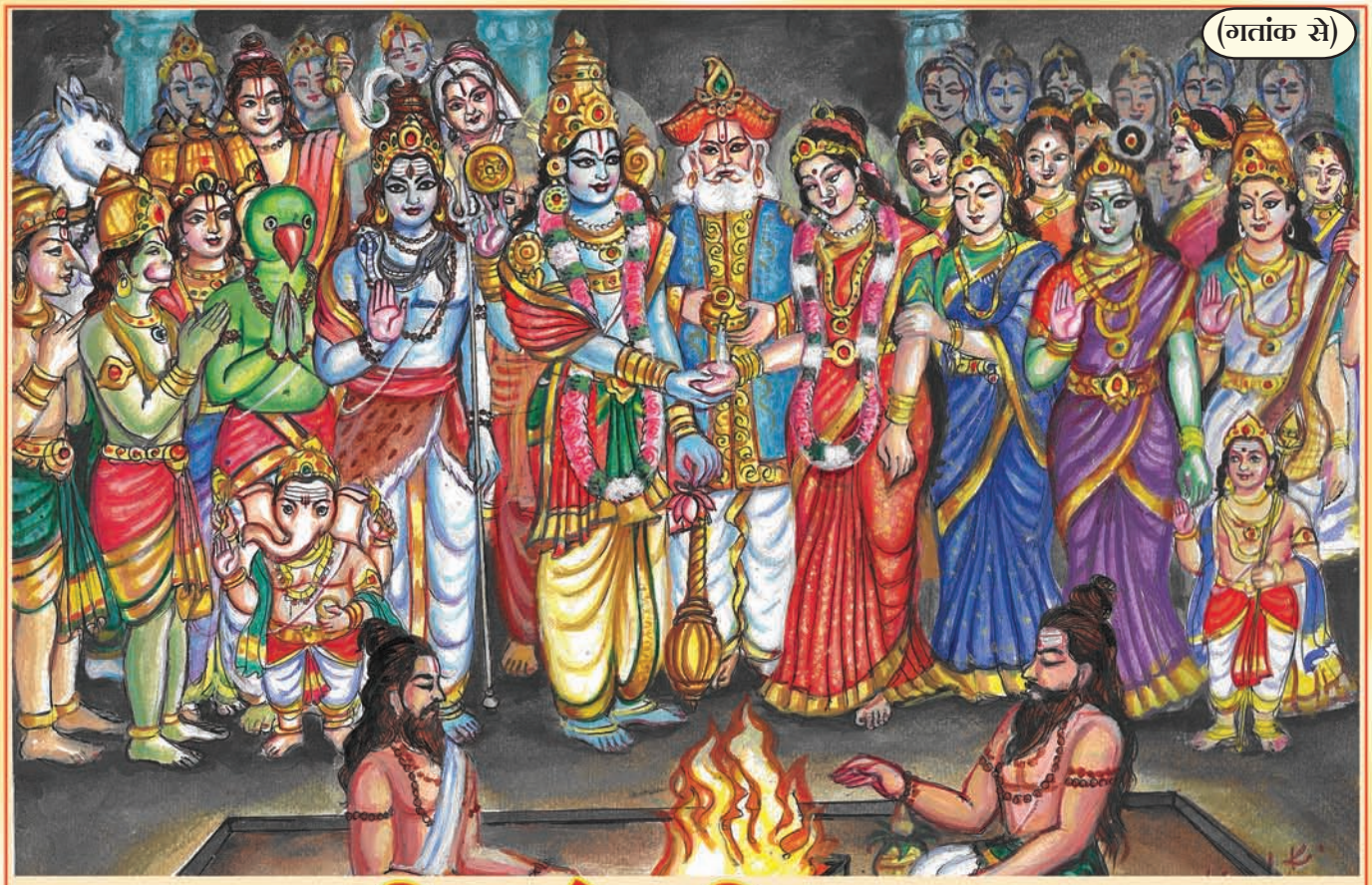

दिव्यक्षेत्र तिरुमल

तेलुगु मूल - श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम्

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण
मोबाइल - ८९२८९५२६२२

श्रीनिवास-पद्मावती में प्रेम

अब श्रीनिवास वकुलमाता के आश्रम में लगने लगा। श्रीनिवास द्वापरयुग का श्रीकृष्ण था और वकुलमालिका माता यशोदा थी। एक दूसरे को देखते ही उन दोनों के बीच यह माँ-बेटे का संबन्ध कायम होगया।

जब श्रीनिवास महोदय अपनी पर्णकुटी से पूरब की दिशा में फल, फूल के संग्रहणार्थ जंगल में गया था, तो नारायणवरम् के पालक राजा आकाश के पुष्पोद्यान में उसका युवरानी पद्मावती के साथ मिलन हो गया था।

पद्मावती साक्षात वैकुंठ की लक्ष्मी देवी की छाया थी, जो छः जनमों से श्रीहरि से विवाह करने को प्रबल आकांक्षा के साथ जनम लेती हुई राह देख रही थी! जब अपने पुष्पोद्यान में श्रीनिवास से उसका साक्षात्कार हो गया, तो उसका होश-हवाश उड़ गया था। आँख से आँख मिलाकर जब श्रीनिवास देखने लग गया, तो युवरानी पद्मावती का दिल मानो पसीज कर गले में आगया। एक अदम्य श्रृंगार भावना के साथ पद्मावती विवश हो गयी। हो सकता था, बुलाये जाने पर वह श्रीनिवास के परिष्वंग में चले जाने पर तैयार हो जाती थी! श्रीनिवास को देखते ही उसे लगने लगा था कि उसे खोजता हुआ खजाना मिल गया। जनम-जनम का निरीक्षण अब फलवंत बनने पर पहुँच गया था। श्रीनिवास के दर्शन से पद्मावती काफी विवश हो गयी थी, मगर उसने अपनी सखियों के संग श्रीनिवास को पराया पुरुष मानते हुए उस पर पथराव किया था। सब नाटक था।

विरह का गिरह

पुष्पोद्यान में मिलन के वृत्तांत के पश्चात श्रीनिवास और पद्मावती अपने-अपने आवास जरूर पहुँचे, मगर बेचैन! किसी को भी शांति नहीं।

श्रीनिवास कुछ खाता-पीता न था। आसमान की ओर तदेक ध्यान से देखने लग जाता था। पद्मावती भी कुछ ऐसी ही बन गयी थी। खान-पान बंद, बोलना बंद और एकांत में रहने लग गयी। श्रीनिवास की सोच में रानी पद्मावती और पद्मा के मन में श्रीनिवास!

इधर वकुलमाता श्रीनिवास की हालत से परेशान और वहाँ राजांतःपुर में महरानी धरणीदेवी अपनी प्रियपुत्री की परिस्थिति पर व्याकुल!!

प्रेम-दूती वकुलमाला

वकुलमाला से श्रीनिवास की हालत देखते न बनी। उठता है; बैठता है और कभी टहलने लगता है। ठीक-से खाता नहीं और सोता भी नहीं। करवटें बदलता रहता है। परध्यान भी ज्यादा हो गया है।

क्या हुआ इस धीर युवक श्रीनिवास को?!

वकुलमालिका एक दिन श्रीनिवास से पूछ बैठी, ''पुत्र! यह क्या हालत बना रखी है तू ने अपने-आप की?! क्या होगया है तुझे? मुझे बता दो न! मैं शायद काफी तुम्हारी मदद कर सकूँगी!!...''

श्रीनिवास ने मुस्कुराया और कहा, ''माँ! दिल पर चोट लगी है!!...''

सयानी माँ सब कुछ समझ गयी!

श्रीनिवास ने माँ से पद्मावती-प्रणयसुंदरी से अपनी मुठभेड़ का सारा वृत्तांत कह सुनाया।

माँ बोली : ''ठीक बेटा! पद्मावती के जनम-जनमों का यह बन्धन अब साकार होने का समय आसन्न हो आया है। पद्मावती के सातों जनमों का निरीक्षण और तपस्या आज फलने को आगयी। आज वह राजकुमारी है और है युवरानी, मगर, राजा आकाश तुझ-जैसा वर विरले ही ढूँढ पा सकेगा! मैं राजा आकाश के अंतःपुर में तेरी दूतिका बन कर जाऊँगी और राजमाता धरणीदेवी से संभाषण करूँगी। उन लोगों से मैं बता दूँगी कि मेरा श्रीनिवास आखिरकार है कौन?!!...''

एरुकलसानी का दौत्य

माँ ने तो बताया था कि वह राजांतःपुर में जायेगी और श्रीनिवास की तरफ वकालत करेगी। मगर श्रीनिवास पद्मावती के प्रणय वृत्तांत में इतना आतुर था कि वह वकुलमालिका के राजांतःपुर में जाने तक रुक न सका। इससे पहले कि वकुलमाँ रानी धरणीदेवी के पास जायें, श्रीनिवास स्वयं एक एरुकलसानी (आन्ध्रप्रान्त में अनायास लोगों को ज्योतिष व भविष्यवाणी बताने वाली औरत) का भेष धर कर राजा आकाश के अंतःपुर में गया।

उस माया एरुकलसानी ने राजा आकाश के अंतःपुर में काफी हल-चल मचायी! उसने रानी धरणीदेवी को बताया था कि श्रीनिवास साक्षात श्रीहरि है। पद्मावतीदेवी भी वैकुंठ की लक्ष्मी का अंश है, जो सात-सात जनमों से श्रीहरि को पति के रूप में पाने के लिए तपस्या कर रही है। अतएव, दोनों का अवश्य एवं शीघ्र समय में विवाह कर देना चाहिए।

इसके उपरांत वकुलमाता राजांतःपुर में नारायणवरम् गयी, तो राज-परिवार ने उसकी अच्छी खातिरदारी की और राज-दंपतियों ने अपनी लाड़ली पुत्री पद्मावती का ब्याह श्रीनिवास से कराने का वादा भी कर दिया!

पद्मावती-श्रीनिवास-कल्याण

शुभवार्त्ता लेकर वकुलमालिका अपने आश्रम में लौट आयी!

नारायणवरम् के राजा आकाश का परिवार श्रीनिवास को देखने व परामर्श के वास्ते अरुणानदी के तट पर वकुलमाला के आश्रम पधारा।

कल्याण की शुभ-तिथि निकाली गयी।

भूगोल के राजा-महराजाओं को आह्वान भेजा गया। समस्त देवी-देवता आमंत्रित हुए। ऋषि-मुनि बुलाये गये। पंडित और पामर आये।

वैशाखमास था। शुक्लपक्ष दशमी तिथि शुक्रवार के दिन विवाह का मुहूरत निकाला गया। वह उत्तरफल्गुणी नक्षत्रयुक्त शुभलग्न था।

श्रीनिवास-कल्याण की विशेषताएँ

अब श्रीमन्महालक्ष्मी जो कल्याण में आकर क्या सम्मिलित हुई कि विवाह के कार्यों में उधृतपूर्ण गति आगयी।

नारायणवरम् के विशाल आवरण में शीतलदेयी छप्पर डाल दिये गये, जिनके मध्य कल्याण-वेदी का सुविशाल मंडप बना दिया गया था। साक्षात् लक्ष्मीदेवी ने अपनी बहिनें, लोक-माताएँ पार्वती, सरस्वती, शचीदेवी आदि पुण्यशीला देवियों की सहायता से श्रीनिवास को सानंद, सालंकृत दूल्हा बनाया।

शुकमहर्षि, सनक आदि वेदविद मंत्र-पठन कर रहे थे।

समस्त दिक्पालों के साथ इन्द्र आसीन था।

सर्व लोक देवी-देवता आकर उपस्थित हुए थे। सर्वत्र वैभव तथा खुशहाली थी! कलियुग के कल्याण नायिका श्रीपद्मावतीदेवी की कंठ-सीमा में श्रीश्रीनिवास सार्वभौम ने मंगल-सूत्र बाँध कर अपनी पत्नी बनाली!! इस दौरान श्रीपद्मावती के जन्मांत निरीक्षण समाप्त होकर, उसने समस्त लोकों के सार्वभौम से विवाह कर अपनी तपस्या को अंत कर समाप्त किया! समस्त लोकों में शांति तथा सौभाग्य संपदाओं की भरमार हुई!

श्रीनिवास का महाप्रस्थान (तिरुमलगिरि पर)

श्रीनिवास महाप्रभु तिरुचानूर से श्रीनिवासमंगापुरम् पहुँचा। मन भारी था। हृदय व्यग्र था। साथ अपनी हृदयेश्वरी महालक्ष्मी न थी। मगर उसके साथ अपनी नव-परिणीता पत्नी, कलियुग की कथानायिका! पद्मावती का नाम ही अलर्मेल्मंगा अपने प्राणनाथ, कलियुगेश श्रीनिवास को छोडने श्रीनिवासमंगापुरम् तक आयी थी। द्रविड़ भाषा में 'अलर्' शब्द का अर्थ कमल का फूल है। ''अलर्मेल्मंगा'' का अर्थ है - ''कमल के फूल पर आसीन महालक्ष्मी।'' एक लक्ष्मी चली गयी तो क्या, दूसरी लक्ष्मी साथ ही थी! इसी भाव को मद्देनज़र रखती हुई असली था बड़ी महालक्ष्मी अपने प्राणेश श्रीनिवाससार्वभौम को छोड़ कर, कोल्हापुर चली गयी थी।

श्रीनिवासमंगापुरम् में श्रीनिवास और अलमेलुमंगा अपने परिवार के सदस्य, भाई-बन्धू, भक्तजन तथा अभिमानी व अनुचर गणों के साथ कोलाहलपूर्ण ढंग से कई साल व्यतीत किया। वेदान्त, दार्शनिक चर्चाएँ, गोष्ठियाँ, संगोष्ठियाँ चलाते हुए आनंदमग्न जीवन बिताते रहे।

उन दिनों तिरुमलगिरि वृषभाद्रि, अंजनाद्रि, नारायणाद्रि, शेषाद्रि नामों से विख्यात था। शेषाचल पर उन दिनों ऋषि, मुनि, तापसि, साधु, संतों का बड़ा आवास था। तिरुमल-शेषाचल में अनगिनत गुफाओं, पर्णकुटियों, आश्रमों में उपरोक्त महापुरुष तपस्या कर रहे थे! वृषभाद्रि उन दिनों एक महान आध्यात्मिक केन्द्र था, जहाँ देश-विदेशों से सिद्धपुरुष आध्यात्मिक क्रिया-कलापों में भाग लेने आ-जाया करते थे। पारलौकिक इन कार्यक्रमों से तिरुमलगिरि नित्य कोलाहलपूर्ण संरंभों से गूँज उठता था।

ऐसे तिरुमलगिरि के समस्त ऋषि-मुनियों ने एक दिन श्रीनिवासमंगापुरम् चले आये और श्रीनिवाससार्वभौम से विनम्रतापूर्वक विनती की, ''हे त्रिलोक सार्वभौम! आप अब तिरुलगिरि का अधिरोहण कीजिए। तिरुमल के सात पहाड़ सात लोक हैं! आप तिरुमलगिरि पहुँच कर, उन सात पहाड़ों के सार्वभौम बन कर रहिए। इन सातों पहाड़ों पर विराजे, किलयुग का निरीक्षण कीजिएगा!!''

श्रीनिवास ने तिरुमल पहाड़ के उन सिद्ध पुरुषों के आह्वान पर काफी राजी हो गया और कलियुगांत तक वहीं रह कर, युग-निरीक्षण करना चाहा।

अलमेलुमंगा व पद्मावतीदेवी श्रीस्वामी से आज्ञा लेकर अपना चहेती निवास 'तिरुचानूर' चली गयी। और, श्रीनिवासमहाप्रभु ने अपने ऋषि-मुनियों के साथ भूलोक ''वैकुंठधाम तिरुमलगिरि चढ़ कर, विराजित होकर, मनौतियों को संपन्न करते हुए भक्तों को दर्शन दी रही हैं।

(समाप्त)

श्री धनुर्दास स्वामीजी

- श्री गिरिधर गोपाल वी. दरक
मोबाइल - ९७६१३५८२००

तिरुविरुत्थम - श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी कि स्वउपदेश- एक बार श्रीरामानुज स्वामीजी श्रीरंगम से तिरुमल जाना चाहते थे। उस समय वे एक श्रीवैष्णव को भंडार से (जिसे श्री धनुर्दास स्वामीजी नियंत्रित करते हैं) कुछ चावल लाने के लिए भेजते हैं। जब श्री धनुर्दास स्वामीजी को श्रीरामानुज स्वामीजी के श्रीरंगम से जाने की योजना के बारे में ज्ञात होता है, वे भंडार में जाकर अत्यंत दुःखी होकर रोने लगते हैं। इससे उनके श्रीरामानुज स्वामीजी के प्रति लगाव का पता चलता हैं। वह श्रीवैष्णव श्रीरामानुज स्वामीजी के पास लौटकर उन्हें पूरी घटना बताते हैं और श्री धनुर्दास स्वामीजी का भाव समझकर श्रीरामानुज स्वामीजी कहते हैं कि वे भी श्री धनुर्दास स्वामीजी से वियोग नहीं सह सकते।

५) श्रीसहस्रगीति - श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी कि व्याख्यान - एक बार श्री धनुर्दास स्वामीजी के दो भतीजे (जिनके नाम वंदर और चोंदर थे) राजा के साथ जाते हैं। राजा उन्हें एक जैन मंदिर दिखाकर, उसे विष्णु भगवान का मंदिर बताते हुए उन्हें वहाँ प्रणाम करने को कहता है। वास्तुकला में समानता देखकर वे तुरंत उसे प्रणाम करते हैं परंतु फिर राजा उन्हें बताता है कि वह सिर्फ उन्हें सता रहा था और यह एक जैन मंदिर है। वंदर और चोंदर यह जानकर कि उन्होंने श्रीमन्नारायण भगवान के अतिरिक्त किसी और को प्रणाम किया है, तुरंत बेहोश हो जाते हैं। श्री धनुर्दास स्वामीजी यह वृत्तांत सुनकर उनके पास दौड़ते हुए आते हैं और उन्हें अपने चरणों की धूल लगाते हैं जिससे वे तुरंत पुनः होश में आ जाते हैं। यह दर्शाता है की भागवतों के चरण कमल की धूल ही देवान्तर (भले ही अनजाने में किया गया) भजन का एक मात्र उपाय है।

बहुत से द्रष्टांतों में श्री धनुर्दास स्वामीजी का कृष्ण भगवान के प्रति लगाव दर्शाया गया है -

६) तिरुविरुत्थम - श्रीपेरियवाच्चन पिल्लै की व्याख्यान- एक बार एक ग्वाल राजा के लिए जा रहा दूध को चुरा लेता है और राजा के सिपाही उसकी पिटाई करते हैं। वह देखकर श्री धनुर्दास स्वामीजी उस ग्वाले को कृष्ण समझकर, उन सिपाहियों के पास जाते हैं और उनसे कहते हैं कि वे उस ग्वाले को छोड़ दे और उसके अपराध का जो भी दंड है वह उन्हें दे।

७) नाच्चियार तिरुमोळि - श्रीपेरियवाच्चन पिल्लै की व्याख्यान - श्री धनुर्दास स्वामीजी कहते हैं ''क्योंकि कृष्ण बहुत छोटे हैं, वे स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकते। उनके माता-पिता भी बहुत ही नरम स्वभाव के हैं और उनकी रक्षा नहीं कर सकते क्योंकि वे खुद कारागार में बंद हैं। कंस और उसके साथी निरंतर उन्हें मारने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। केवल अंधेरी रात ने ही (जिसमें कृष्ण का जन्म हुआ) उन्हें संरक्षित किया है। इसलिए हम मिलकर अंधेरी रात की प्रशंसा करे जिसने भगवान की रक्षा की।

८) पेरियाळवार तिरुमोळि २.९.२ - तिरुवाय्मोळि पिल्लै व्याख्यान - श्री धनुर्दास स्वामीजी गोपियों द्वारा यशोदा से कृष्ण के माखन चुराने की शिकायत किये जाने पर कृष्ण के पक्ष में समर्थन करते हुए कहते हैं कि - क्या उन्होंने कोई ताला तोडा? क्या किसी के गहने / जवाहरात चोरी किये? फिर क्यों वे कृष्ण की शिकायत करती हैं? उनके स्वयं के घर में बहुत सी गायें हैं जिनसे दूध और बहुत सा मक्खन होता

है। वे क्यों कहीं और से उसे चुरायेंगे? वे तो छोटे बच्चे हैं, संभवतः वे किसी और के घर को अपना घर समझकर अंदर चले गये होंगे। ये गोपियाँ क्यों कहती रहती हैं कि उन्होंने दही, मक्खन, दूध आदि चुराया है?

श्रीपिल्लै लोकाचार्य स्वामीजी ने भी भगवान के मंगलाशासन (भगवान के कल्याण की चाहना) को समझाते हुए अपनी प्रसिद्ध रचना श्रीवचन भूषण दिव्य शास्त्र में श्री धनुर्दास स्वामीजी कि महिमा को दर्शाया है।

कुछ समय बाद, श्री धनुर्दास स्वामीजी अपने अंतिम दिनों में सभी श्रीवैष्णवों को आमंत्रित करते हैं, तदियाराधन कराते हैं और उनका श्रीपाद तीर्थ ग्रहण करते हैं। वे पोंन्नाच्चियार को बताते हैं कि वे परमपद की और प्रस्थान करेंगे और पोंन्नाच्चियार को यहीं कैंकर्य करना है। श्रीरामानुज स्वामीजी की पादुकायें अपने मस्तक पर रखकर, वे अपनी चरम तिरुमेनी का त्याग करते हैं। श्रीवैष्णव उनकी अंतिम यात्रा की तैयारी करते हैं, कावेरी नदी का जल लाकर उन्हें ऊर्ध्वपुण्ड्र से सुशोभित करते हैं। पोंन्नाच्चियार (हेमाम्बा) यह समझते हुए कि श्री धनुर्दास स्वामीजी के लिए परमपद का कैंकर्य प्रतिक्षा कर रहा है, खुशी से उस स्थान की सजावट करती है और पूरे समय सभी श्रीवैष्णवों का ध्यान रखती है। अतः जब श्री धनुर्दास स्वामीजी की तिरुमेनी पालकी पर ले जाई जाती है और सड़क के अंतिम छोर तक पहुँचती है, वे श्री धनुर्दास स्वामीजी के वियोग को सहन नहीं कर पाती और जोर से विलाप करने लगती है और तुरंत अपना शरीर भी त्याग देती है। सभी श्रीवैष्णव जन उन्हें देखकर चकित रह जाते हैं और उसी समय उन्हें भी श्री धनुर्दास स्वामीजी के साथ ले जाने की व्यवस्था करते हैं। यह भागवतों के प्रति लगाव के अत्यधिक स्तर को दर्शाता है जहाँ वे भागवतों से क्षण भर का वियोग भी सहन नहीं कर सकते।

श्रीवरवरमुनि स्वामीजी ने विभिन्न आचार्यों के पाशुरों के आधार पर ''इयल सार्रुमुरै'' (जिसका उत्सव के समय में इयरपा के अंत में गाया जाता है) का संकलन किया है। इसका पहला पाशुर श्री धनुर्दास स्वामीजी द्वारा लिखा गया है और हमारे संप्रदाय का सार है।

नन्नुम् तिरुवुदैयोम् नानिलथ्थिल् एव्वुयिर्क्कुम
ओन्नुम् कुरै इल्लै ओदिनोम्
कुंरम् एदुथ्थान अदिचेर इरामनुजन थाल
पिदिथ्थार् पिदिथ्थारैप् पर्रि

अर्थ - हम घोषणा करते हैं कि कोई चिंता-फिकर न करते हुए, वास्तविक संपत्ति (कैंकर्य) को करते रहें क्योंकि हम श्रीवैष्णवों की शरण में है, जो श्रीरामानुज स्वामीजी की शरण है, जो स्वयं भगवान कृष्ण के शरण है, जिन्होंने अपने प्रिय भक्तों (गोप और गोपियों) की रक्षा के लिए गोवर्धन पर्वत को उठाया था।

इस पाशुर में धनुर्दास ने निम्न सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत दर्शाये है -

१) श्रीवैष्णवों की सबसे बड़ी संपत्ति - कैंकर्यश्री हैं (दासत्व की संपत्ति)।

२) श्रीवैष्णवों को सांसारिक विषयों की चिंता नहीं करना चाहिए।

३) श्रीवैष्णवों को कैंकर्यश्री की महा संपत्ति भगवान और श्रीरामानुज स्वामीजी की कृपा से मिलती है।

४) आचार्य परंपरा के द्वारा श्रीवैष्णवों का श्रीरामानुज स्वामीजी से संबंध है।

बार बार हमारे पूर्वाचार्यों ने बताया है कि श्रीवैष्णव की महिमा किसी विशेष वर्ण में जन्म से नहीं होती अपितु भगवान और अन्य श्रीवैष्णवों के प्रति उसकी निष्ठा और प्रेम से होती है। पिल्लै उरंगा विल्ली धनुर्दास का जीवन और हमारे आचार्यों द्वारा उनकी महिमा गान, हमारे आचार्यों का इस सिद्धांत पर उनके मनोभाव का स्पष्ट संकेत है।

इस तरह हमने पिल्लै उरंग विल्ली धनुर्दास और पोंन्नाच्चियार के गौरवशाली जीवन की कुछ अंश को मनन किया। वे दोनों ही भागवत निष्ठा में पूर्णतः स्थित थे और श्रीरामानुज स्वामीजी के बहुत प्रिय थे। हम सब उनके श्रीचरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो।

पिल्लै उरंगा विल्ली (धनुर्दास) की तनियन

कुम्भाश्लेषा समुद्भूतं अंतरंगचरं हरे।
रामानुजस्पर्शविधि धनुर्दासमहं भजे।।

(समाप्त)

''अरलेक ईयन्नमाचार्या...

...गुरुहरि भक्तुलारा!''

(- अन्नमाचार्य-चरित्रा, द्विपदा, पुटा-५७-५९)

(बिना किसी कमी के इस अन्नमाचार्य के इतिहास को निड़र होकर मैं आपको निवेदित कर रहा हूँ। मुझे मान्यता देकर, अलमेलुमंगा के साथ, कभी तुझे न विहाये भक्त-समुदास के साथ, श्रीवेंकटाचलाधीश! सुन लो। ऐ श्रीहरि के महान् भक्तों! सुन लो।)

भूलोक में वैकुंठ बनकर भासमान पवित्र गिरि है तिरुमल। अन्नमय्या धन्य जीवी है, जिसने उन परम पावन पहाड़ों में अणुरेणु-परिपूर्ण बन व्यापित श्रीवेंकटाचलाधीश को अपनी पद-कविताओं से अर्चित किया था। उसने गान-लोक उस श्रीहरि को अपने ३२ हजार संकीर्त्तनों को समर्पित कर, अपने आपको धन्य करने के बावजूद, समस्त तेलुगु जाति को भी धन्य बनाया। सभा-प्रशंसाओं, साहिती गोष्ठियों, सन्मानों के लिए न होकर केवल भगवान श्रीहरि को पहुँचने के वास्ते ही अपनी संकीर्त्तनाओं की रचना चली थी। तभी तो अन्नमय्या चिर स्मरणीय बना हुआ है। चिरंजीवत्व को पाया है।

३२ हजार संकीर्त्तनाओं से भगवानजी की लीलाओं के गान किया हुआ अन्नमय्या तेलुगु के साहित्य के इतिहास में 'पदकविता पितामह' के तौर पर ख्याति पाया हुआ है। तिरुमल श्री वेंकटेश्वर पर आशु-तौर पर पदकविता रचकर, अनेक विधाओं से स्तुति की है। भगवानजी की लीलाओं, दशावतार की घटनाओं, रामायण, भारत, भागवत पुराणों को अपने पदकविताओं में सराहा है। श्री वेंकटेश्वरस्वामी पर भक्ति का जनमानस में प्रचार करते हुए उन दिनों के सारे आंध्रप्रदेश का पर्यटन किया था। अनगिनत क्षेत्रों का संदर्शन किया था। तीर्थों का सेवन किया। तिरुपति श्री गोविंदराजस्वामी, कड़पा के श्री वेंकटेश्वरस्वामी, ओंटिमिट्टा के श्री कोदंडरामस्वामी, प्रोद्दुटूरु श्री चेन्नकेशवस्वामी, अहोबिल श्री नारसिंहस्वामी, मार्कापुरम् श्री चेन्नकेशवस्वामी, कोयिलकुंट्ला श्री पांडुरंगस्वामी, श्रीरंगम् श्रीरंगनाथस्वामी, वायल्पाडू श्री पट्टाभिरामस्वामी, कसापुरम् श्री आंजनेयस्वामी... ऐसे कई क्षेत्रों में विलसित विविध अर्चावतारमूर्तियों का संदर्शन कर, अपने संदर्शित अर्चावतारों में निरंतर आप पूजित श्री वेंकटेश्वर को संभावित कर, उन सब देवता मूर्तियों को अपने आराध्य श्रीनिवास के

प्रतिरूप मानते हुए उन पर पदों की रचना कर, उन्हें गाकर स्वरार्चना की थी!! नित्य कल्याणोत्सव, जागरण, शयनोत्सव, वसंतोत्सव- ऐसे श्रीस्वामीजी को संपन्न हर कैंकर्य में, उन-उन संदर्भों के लिए उचित पदों की रचना कर कृतार्थ बन गया है।

कड़पाजिले के राजंपेटा मंडल के छोटे-से गाँव ताल्लपाका में लक्कमांबा, नारायणसूरि नाम के दंपतियों के पुण्य गर्भवास में सन् १४०८ के वैशाखमाह की पौर्णमी तिथि पर **भगवान महाविष्णु के खड्ग नंदक के अंश से जनम लिया था अन्नमय्या ने।** अपने पाँचवें वर्ष में उपनयन, विद्याभ्यासों के संभव होने पर, एक दिन दर्भाओं के संचयन के वास्ते जंगल में गये हुए अन्नमय्या ने वहीं से ही श्री वेंकटेश भगवान के भक्तों से मिलकर तिरुमलगिरि पहुँच कर स्वामी का संदर्शन कर, अपने सोलवें साल में संकीर्त्तनायज्ञ को आरंभ किया था!

विजयनगर के राजा सालुव नरसिंहरायलु के आह्वान के मुताबिक पेनुगोंडा पहुँच कर, वहाँ कुछ समय तक राजाश्रय में रहकर पदकवि के तौर पर जगत्-प्रसिद्ध बना था। रायलु को अपने पदों में न सराहने के कारण श्रृंखलाओं से बंदीकृत बन, तदनंतर विमुक्त बन और विरक्त बन, तिरुमल-पुराधीश की सेवा में शेष जीवन बिता कर, तदनंतर पदकवियों के लिए मार्गदर्शक बना था। यह रहा - अन्नमय्या से संबन्धित संक्षिप्त इतिहास!!

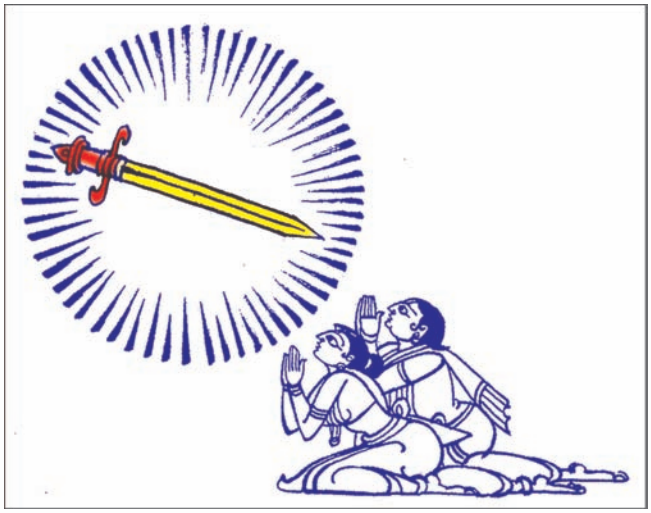

अन्नमय्या की पदार्चना उसीसे अंत न हुआ था। उनका वंश एक साहिती उपवन था। उस उद्यान में फूले हर कुसुम भगवानजी के दिव्य पादपद्मों का आश्रय पाया हुआ था। अन्नमय्या पदकविता पितामह बनने पर, उसकी पत्नी ताल्लपाका तिम्मक्का तेलुगु में प्रथम कवयित्री थी! वह एक विशिष्ट परिवार था। उसके वंश में, उसके अनंतर की पाँच पीढ़ियों के लोग, अपने साहित्य से उस अलमेलुमंगापति की स्वरार्चना करना हम अन्यत्र न दरस पायेंगे!! अपने विश्वास विभूति तिरुमलनाथ के गुणगान संकीर्त्तन को ही उछ्वास और निश्वास बनकर रहे ताल्लपाका-वंशजों का इतिहास जानने की कतई आवश्यकता है!

अन्नमय्या का वंश

ताल्लपाका चिन्नन्ना ने अपने ग्रंथ 'अन्नमाचार्य-चरित्रा द्विपद काव्य' में बताया है कि अन्नमाचार्य नंदवर अन्वय का था! नंदवरीक ब्राह्मण परिवार से संबन्धित है अन्नमय्या। अन्नमय्या का वंश नंदवरीक वंश है। नंदवर अग्रहार से संबन्धित हैं नंदवरीक लोग। इस वंश के पीछे एक ऐतिह्य है। सन् १०वीं शताब्दी में आज के कर्नूल जिले के ''नंदवरम्'' नामक गाँव को नंद नामक राजा पालता था। यह प्रतीत था कि यह पांडवों के वंश का था! इसे एक प्रबल इच्छा थी कि वह हर रोज प्रातःकाल काशी जाकर वहाँ की गंगानदी में स्नान कर आये! दत्तात्रेय नामक सिद्धपुरुष की मंत्रशक्ति के प्रभाव से राजा नंद हर रोज सूर्योदय से पहले काशीपट्टण जाकर, वहाँ बहती गंगा में स्नान कर, सूर्योदय से पहले घर वापस आ जाता था! लेकिन, राजा की पत्नी ने अपने पति के इस आचरण को भाँप लिया। तब रानी ने भी अपने पति से जिद पकड़ ली कि वह भी उसके साथ काशी आजायेगी! लाचार राजा नंद अपनी प्यारी पत्नी को अपने साथ काशी ले गया। मगर लौटते समय रानी ऋतुमती बन गयी थी, तो उन पर से सिद्ध की मंत्रशक्ति हट गयी थी! राज-दंपती काशी नगर छोड़ नंदवरम न निकल सके। इस संकट को लेकर राजा नंद ने काशी में स्थित महामहिमान्वित वेद पंडितों का आश्रय लिया। उसने उन

पंडितों से आग्रह किया कि वे उन दम्पतियों को कैसा भी अपना गाँव पहुँचायें। तब उन ब्राह्मणों ने अपनी तपोशक्ति आजमाकर राज-दम्पतियों को अपनी राजधानी पहुँचाया। राजा नंद ने उस समय गंगानदी के समान परम पवित्र चामुंडेश्वरीदेवी को साक्षीभूत बना कर प्रतिज्ञा की थी कि वह इस महोपकार के प्रति उन ब्राह्मण पंडितों की आयिंदा सहायता करेगा, चाहे वह सहायता कितना भी संक्लिष्ट क्यों न हो!

कालचक्र फिरता गया। काशी में भयंकर अकाल पड़ा। लोग भूखों मरने लगे। राजा नंद के वादे को याद करके काशी के ब्राह्मणों का झुंड नंदवरम् पहुँच कर, राजा से सहायता माँगी, तो राजा पलट गया। उसने पंडितों को बताया कि उसने उन्हें कोई वादा नहीं किया था। उल्टा उसने ब्राह्मणों से आग्रह किया कि वे अपने वादे का कोई प्रमाण दिखावे। काशी के पंडित राजा के इस दुराचरण पर खिन्न हुए और लाचार होकर उसी चामुंडीदेवी से विनती की थी कि अब वह स्वयं वहाँ आकर राजा से अपने वादे की साख दे!!

भक्तवत्सला माँ चामुंडेश्वरी अपने भक्तों की मिन्नत पर पसीज कर वहाँ राजा के दरबार में झट प्रत्यक्ष हो गयी और राजा नंद से बताया कि अपने वादे के अनुसार वह उन पंडितों की यथाशक्ति मदद करे! तब राजा नंद ने अपनी भूल सँवार कर, उन काशी के ब्राह्मणों को नंदवरम् को ही अग्रहार के तौर पर धारादत्त कर, साक्ष्य बताने काशी से आयी चामुंडेश्वरी देवी से प्रार्थना की कि वह कृपा कर उसी गाँव में बस जाये! बस माता चामुंडेश्वरी साक्षीमाता चौडेश्वरी बन कर नंदवरम् में बस गयी!!

यह सारा विवरण गौनिपल्लि रामप्पकवि से प्रणीत 'चौडेश्वरी-माहात्म्य' में बताया हुआ है। इस नंदवर अग्रहार से संबन्धित सभी ब्राह्मण नंदवरीक बने हुए हैं। उस नंदवरीक वंश से संबन्धित लोग ही ताल्लपाका वाले। नंदवर अग्रहार से कड़पाजिले के राजंपेटा मंडल में स्थित ताल्लपाका में आने के कारण, ताल्लपाका में अन्नमाचार्य के वंशज स्थिर निवास बनाने के कारण, ताल्लपाका में

अन्नमाचार्य के वंशीकों के घर का नाम ताल्लपाका नाम से ठहर गया है। इनका गोत्र भारद्वाजस गोत्र है और अश्वलायन सूत्र है!!

अब अन्नमय्या के पूर्वजों के विषय में आने पर -

''नंदवरान्वयार्णव...
...नारायणुनि तंड्रियय्ये;!

(अन्नमाचार्य-चरित्र, द्विपदा, पुटा-७२, ७३)

नंदवर अन्वय में जन्मित नारायण वेदपारायण और विष्णु-भक्त था। इसके विट्ठल नाम का पुत्र था। उस विट्ठल को नारायण नाम का पुत्र, उस नारायण का विट्ठल नाम का कुमार, उसे लोकैक नुत नारायण नाम का सुत, उस नारायण को नारायणसूरि नाम का पुत्र हुआ था। उस नारायणसूरि का पुत्र ही अन्नमय्या।

''सिरिवरु मेप्पिंचि चेलंगि...
...नेंतयुं दनरारु चुंडे;

(अन्नमाचार्य-चरित्र, द्विपदा, पुटा ४२२)

अन्नमय्या ने श्रीनिवास के वर-प्रसाद के बल से अपने-सरीखे पुत्र पाये थे। उनमें नरसयाचार्य बड़ा बेटा था। दूसरा कुमार तिरुमलाचार्य था। नरसयाचार्य अन्नमय्या की प्रथम पत्नी तिरुमलम्मा (तिम्मक्का) का पुत्र था। दूसरी पत्नी अक्कलम्मा का कुमार तिरुमलाचार्य था!!

हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु
हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
मोबाइल - ९४९०९२४६१८

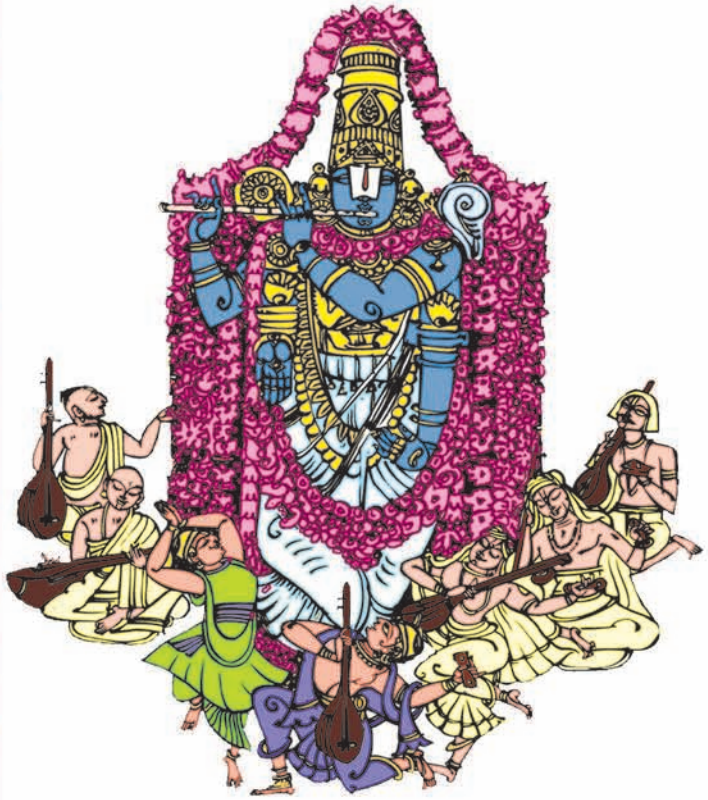

भक्ति की महत्ता - परिभाषा

''नाहं वेदैर्न तपसा नदानेन नचेज्यया।
शक्य एवं विधो दष्टुं दृष्टवानसिमां यथा।।
भक्त्यात्व नन्यया शक्य अहमेवं विधोर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुंच तत्वेन प्रवेष्टुंच परंतप।।''

(गीता-११-५३,५४)

भगवान की कृपा प्राप्ति के लिए केवल वेदों का अध्ययन करना, तपस्या करना, दान देना, याग-यज्ञ करना पर्याप्त नहीं होता है। गीताचार्य श्रीकृष्ण ने 'भगवद्गीता' में यह सूचित किया है कि उपर्युक्त वैदिक कर्म के साथ-साथ भगवान के प्रति अनन्य भक्ति को जोडना श्रेष्ठतर कर्म होता है। भागवत में प्रह्लाद ने भी अपने वचनों में इसी भाव को मुखरित किया, यथा –

''मन्ये धनाभि जनरूप तपःश्रुतौज।
स्तेज प्रभाव बल पौरुष बुद्धियोगाः।।
नाराधना याहि भवंति परस्यपुंसो।
भक्त्यातुतोष भगवान ननु (गज) यूथपाय।।''

(श्रीमद्भागवतम्)

इसी प्रकार की भावाभिव्यक्ति हरिदास श्रेष्ठ श्री विजयदासजी इस रूप में व्यक्त करते हैं -

दान धर्मके शिलुक। स्नानमौनके शिलुक।
गान यागके शिलुक। काणिके कोट्टरे शिलुक।
एणिसि जपिसलुशिलुका। नाना व्रतमाडलुशिलुक।
ये नेनु कर्मके शिलुक। माणदे दृढ़ भकुति मातुर विट्टरे।
तानागि करेयदे बलियल्लि बंदीग काणिसि कोम्बनु
भक्तनिगनुदिन।।

व्यासदासजी की उपर्युक्त पंक्तियाँ यह बोध कराती है कि भगवान का साक्षात्कार तथा भगवान का कटाक्ष केवल दान देने पर, पुण्यस्नान या मौन धारण करने पर, याग-यज्ञ आदि करने पर, भेंट देने पर, जप-तप, होम या व्रत रखने पर नहीं मिलता बल्कि भगवान की कृपा प्राप्ति के लिए पूर्णतया भक्ति को अपनाने की अनिवार्यता है।

पुरंदरदास का भी यही मत है - सब कुछ, (शाश्वत सुख) को प्राप्त करने के लिए समग्र रूप से भक्ति करना ही एकमात्र साधना या उपाय बनती है।

'भक्ति' : परिभाषा

'भक्ति' को परिभाषित करना या उसके मूल्य के अंकन के लिए उसके वजन को तोलना संभव नहीं होता है। उसकी अतिरेकता केवल भावात्मक रूप में व्यक्त हो सकती है। जगद्गुरु श्रीमध्वाचार्य ने भक्ति की परिभाषा इस रूप में प्रस्तुत किया-

''महात्म्य ज्ञानपूर्वस्तु सुदृढ़ः सर्वतोऽधिकः।
स्नेहू भक्तिरितिप्रोक्त यामुक्तिर्नचान्यथा।।

भक्ति करने का मुख्य उद्देश्य मोक्ष को प्राप्त करना ही है। ज्ञान, अचल, अन्य विषयों का भीम परिमाण से भी बढकर भगवान के प्रति का जो प्रेम है, उसकी उपासना करना ही 'भक्ति' कहलाती है। इस 'भक्ति' का बलवती उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति ही होती है। विपत्ति भी अगर आ पडे, तब भी हमारे मन से भक्ति को छोडना नहीं चाहिए। इसी को 'दृढ भक्ति' कहते हैं। जब हम भगवान को श्रेष्ठतम मानने लग जायेंगे तो परिवार, परिसर, भोग-विलास आदि सभी हमें नगण्य, तुच्छ लगने लगते हैं। श्रीमध्वाचार्य के विचार का अनुपालन करते हुए इस परिभाषा को और अधिक विस्तार देकर श्रीमद्जयतीर्थ स्वामी ने अपने विचार इस प्रकार प्रस्तुत किया- 'परमेश्वर भक्तिर्नाम निरवधिकानंतानवद्य कल्याणगुणत्व ज्ञान पूर्वकस्वात्मात्मीय समस्त वस्तुभ्योऽनेक गुणाधिको अंतराय सहस्रेणाप्य प्रति बद्ध निरंतर प्रेम प्रवाहः।' यानी श्रीहरि को प्राप्त करने के लिए उसके प्रति केवल भक्तिभाव ही पर्याप्त है।

''भक्त्यार्थान्यखिलान्येव भक्तिर्मोक्षायकेवला।
मुक्ता नामपि भक्तिर्हि नित्यानंद स्वरूपिणी।।''

इस विश्व में जो भी व्यक्त है, वह सभी भक्ति के लिए ही है। इस भक्ति के कारण ही मोक्ष प्राप्त होती है। मुक्त जीवियों के लिए भी भक्ति नित्यानंदस्वरूपा बन जाता है। जगद्गुरु के रोचक वचन - 'ज्ञानपूर्वः परःस्नेहो नित्यो भक्तिरितीर्यते'- यानी वे यह कहना चाहते हैं कि दृढ़ स्नेह या दोस्ती के साथ ही भक्ति को प्राप्त कर सकते हैं। ज्ञानातिरेकता के कारण सब कुछ संभव नहीं होता, श्रीमहाविष्णु को प्रसन्न करने के लिए भक्ति ही उपकरण बनती है, और कोई चीज काम नहीं आती। उस महाविष्णु के प्रति जो भक्ति हम दिखाते हैं, वही मुक्ति का प्रधान राह बनता है।

''भक्त्यैवतुष्ठि मभ्येति विष्णुर्नान्येन केनचित्।
स एवमुक्ति दाताच भक्तिस्त त्रैवकारणम्।।''

भक्तों के मन में उसके प्रति अमल या शुद्ध भक्ति होनी चाहिए। इतना ही नहीं बल्कि उसके प्रति 'मुक्तिर्नैज सुखानुभूति रमला भक्तिश्च तत्साधनम्' - जैसी त्रिकरण माने मानसा-वाचा-कर्मणा भक्ति होनी चाहिए। आचार्य श्रेष्ठों की भक्ति संबंधी परिभाषाओं के भाव की पुष्टि में हरिदास जन निर्मलभक्ति के भाव को बडे विस्तार के साथ प्रस्तुत किया। भक्तों के द्वारा जो विधि व रीति का पालन करना होता है, उसे हरिदास भक्तों ने निम्नलिखित रूप में प्रकट किया।

'भक्ति गेमूरु गुणगलुबेकु युक्तिवंतरु केलि।
मुक्ति शीलव तिलिदु निज विरक्ततनदलिबालि।।''

''प्रेम प्रीतिरतिनेमदलि श्रीस्वामी चरणदल्लिरबेकु।
सौम्य समाधानदलि तानमृतवनु उणबेकु।।''

''रोमरोमनुकोमल वागि निर्मलदल्लिडबेकु।
शम दमे यलिताक्षमे यनुपडेदु समदृष्टिगुडबेकु।।''

उपर्युक्त पंक्तियों से यह बोध व्यक्त होता है कि विद्वज्जनों व विवेकियों को भक्ति के तीन गुणों की पहचान रखनी चाहिए। मुक्ति की सूक्ष्मता को पहचान

कर ऐसे लोगों को विरागयुक्त जीवन शैली को अपनाना चाहिए। इसके लिए क्रमशः प्रेम, प्रीति तथा रति भाव को श्रद्धापूर्वक, बड़ी निष्ठा के साथ श्रीहरि के चरणकमलों में स्थापित कर देना चाहिए। इसके साथ-साथ दूसरों से 'जिह्वामेमधुमत्तमा!', 'वाङ्मयं तप उच्यते', 'प्रियं ब्रूयात्' जैसी शपथवचनों के साथ विनम्रव्यवहार करना चाहिए। ऐसा करने पर लगेगा कि हम अमृतपान कर रहे हैं। ऐसा व्यवहार केवल शरीर तक सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि तन के रोम-रोम में शुद्धता ले आकर शमन-दमन का पालन करते हुए, क्षमागुण को अपनाकर, शत्रुओं तथा मित्रों के प्रति, सम्मान तथा अपमान के संदर्भों में, शीतोष्ण व सुख-दुःख में, निन्दा-स्तुति के समय, लोहा व कंचन के प्रति समान दृष्टि को रखना होता है।

'नित्यानित्य विवेकवतिलिदु पथ्यदलिनडेयबेकु।
चित्तवृत्तिसुवृत्तियमाडि सत्यदलिनुडियबेकु।।

उत्तमोत्तम वस्तुदनिज सुख हृत्कमलदल्लिडबेकु।
भक्तिगे भावने बलगोंडु वैराग्यद सुखतोडबेकु।।

उपर्युक्त पंक्तियाँ यह बताती हैं कि साधक को नित्य व अनित्य की पहचान विवेकपूर्वक करके, उसका अनुकरण करना चाहिए। यानी हमें यह मानकर चलना होगा कि इंदिरानाथ ही नित्य व सत्य है और वह इह तथा परलोक का सत्य है। यही इसका मूल है, अनुकरणीय मार्ग है। मन तथा बुद्धि को **'सत्यं ब्रूयात्! सत्यं प्रियहितंचयत्'** जैसे गुणों से सटीक रीति में अच्छी व युक्त चीजों पर मन-बुद्धि को केन्द्रीकृत कर सन्मार्ग पर चलना होगा। केवल श्रीहरि को श्रेष्ठ व वरेण्य मानकर अपने हृदयकमल में स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार की भक्ति भावना का निरंतर वृद्धि करके हर पल विराग भाव के साथ आगे बढ़ना चाहिए और उसी भाव में सुख की अनुभूति पाना चाहिए।

'सोह्यसोन्नियसूत्रव तिलिदुस्थाइक नागिरबेकु।
ध्येयध्यात ध्यानव तिलिदु मायद मोनिमुरियबेकु।।

न्यायनीतियनेले निभवनु उपायदलि अरियबेकु।
पायकनाग नुदिन महिपतिगुरुपाददि स्थिरविरबेकु।।

उपर्युक्त पंक्तियों में हरिदास के भाव इस प्रकार व्यक्त हैं - श्रीहरि को हृत्कमल में स्थापित कर, भक्ति भाव से मुक्ति पाने के लिए उसके गुणों का सही पहचानकर, माया के वशीभूत न होकर, न्याय तथा नीति के पथ को न छोडकर, सदा श्रीहरि, वायु तथा गुरुजन में तारतम्यता स्थापित कर भक्ति को अपनाना ही भक्त का कर्त्तव्य है, उसी में उसका श्रेय है।

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या, श्री किरणभट
हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी
मोबाइल - ९९४९८७२१४९

पाठ - ३

संयुक्ताक्षराणि (संयुक्ताक्षर):-

क	ख	ग	घ	ङ					
क्	ख्	ग्	घ्	ङ्					
च	छ	ज	झ	ञ					
च्	छ्	ज्	झ्	ञ्					
ट	ठ	ड	ढ	ण					
ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्					
त	थ	द	ध	न					
त्	थ्	द्	ध्	न्					
प	फ	ब	भ	म					
प्	फ्	ब्	भ्	म्					
य	र	ल	व	श	ष	स	ह	क्ष	ज्ञ
य्/य	ʿ / ‸	ल	व्	श्	ष्	स्	ह्	क्ष्	ज्ञ्

अप्रैल महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र
मोबाइल - ९९८९३७६६२५

मेषराशि - इस राशि एवं जातक के लिए मंगल, गुरु, शनि दशमभाव, राहु तृतीय एवं केतु नवम भावगत है। ग्रहों के स्थिति के अनुसार जातक का स्वास्थ्य सामान्य रहेगा। गृह में मांगलिक कार्य, भूमि-जायदाद का क्रय-विक्रय होंगे।

वृषभराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए राहु द्वितीय, केतु अष्टम एवं मंगल, गुरु, शनि नवम भावगत रहेगा। ग्रहों के स्थिति के अनुसार जातक के स्वास्थ्य में समय-समय न्यूनता मानसिक तनाव बना रहेगा। राहु, केतु का जप, दान करें।

मिथुनराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए राहु प्रथम, केतु सप्तम मंगल, गुरु, शनि अष्टम भावगत रहेंगे। ग्रहों के स्थिति के अनुसार अनावश्यक वाद विवाद की स्थिति बनी रहेगी। कठिन परिश्रम से शिक्षा में सफलता। सुन्दरकांड का पाठ करना लाभदायक रहेगा।

कर्कराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए केतु षष्ठ, भावगत, मंगल, गुरु, शनि सप्तम भावगत एवं राहु द्वादश भावगत रहेंगे। ग्रहों के स्थिति अनुसार जातक का स्वास्थ्य सामान्य। शिक्षा में प्रगति तथा नौकरी के अवसर प्राप्त होंगे।

सिंहराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए केतु पंचम, मंगल, गुरु, शनि षष्ठ एवं राहु एकादश भावगत होंगे। ग्रहों के स्थिति अनुसार उदर विकार की शिकायत रहेगी। इष्टमित्रों के सहयोग से अभिष्टकार्य की सिद्धि होगी।

कन्याराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए केतु चतुर्थ, मंगल, शनि, गुरु पंचम एवं राहु दशम भावगत रहेंगे। ग्रहों के स्थिति के अनुसार गृह में शुभ कार्य। अनेक महत्वपूर्ण यात्राएँ होंगी।

तुलाराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए केतु तृतीय, मंगल, गुरु, शनि चतुर्थ, राहु नवम भावगत रहेगा। शनि की अढैया रहेगी। पारिवारिक चिन्ता, आर्थिक चिन्ता बनी रहेगी। कठिन परिश्रम से शिक्षा में सफलता। हनुमद्दर्शन, सुन्दरकाण्ड का पाठ श्रेयस्कर रहेगा।

वृश्चिकराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए केतु द्वितीय, मंगल, शनि, गुरु तृतीय एवं राहु अष्टम भावगत रहेगा। ग्रहों के स्थिति अनुसार जातक का स्वास्थ्य मध्यम रहेगा। कुटुम्ब वर्गों से तनाव भूमि जायदाद आदि का क्रय-विक्रय होंगे। देवी कवच का पाठ करना लाभप्रद रहेगा।

धनुराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए केतु प्रथम, मंगल, गुरु, शनि द्वितीय एवं राहु सप्तम भावगत रहेगा। शनि की साढेशाती पैर पर उतरती रहेगी। शारीरिक कष्ट होंगे। शुभकार्यों में अवरोध उत्पन्न होंगे। शनि की आराधना करें।

मकरराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए मंगल, गुरु, शनि प्रथम, राहु षष्ठ एवं केतु द्वादश भावगत रहेगा। शनि की साढेसाती रहेगी। पारिवारिक चिन्ता बनी रहेगी। प्रतिष्ठा एवं धनक्षति का योग बनेगा। सुन्दरकाण्ड का स्वयं पाठ करना श्रेयस्कर होगा।

कुम्भराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए पंचमभाव में राहु, एकादश केतु, द्वादश भावगत मंगल, गुरु, शनि रहेगा। गृह में मांगलिक तथा विकास के कार्य होंगे। विपक्षियों से सावधानी।

मीनराशि - इस राशि एवं लग्नवाले जातक के लिए राहु चतुर्थ, केतु दशम एवं मंगल, गुरु, शनि एकादश भावगत रहेंगे। वात-पित्त जन्य विकार। व्यापार एवं राजनीति के क्षेत्रों में लाभ। स्त्री प्राप्ति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : .....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) .....
.....
पिनकोड .....
मोबाइल नं .....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा
☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर
0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ
0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code:
0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

भक्तों की सेवा में...

आधुनिकीकरण के बाद अश्विनी अस्पताल के प्रारंभोत्सव

ति.ति.दे. न्यासमंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी ने १४ फरवरी, २०२०, शुक्रवार को तिरुमल में आधुनिकीकरण किए हुए अश्विनी अस्पताल के प्रारंभोत्सव कार्यक्रम में भाग लेकर पूजा की। उसके बाद उन्होंने मीडिया से बात करते हुए कहा कि- तिरुमल को आ रहे भक्तों एवं स्थानीय लोगों की सुविधा हेतु अपोलो एवं टाटा ट्रस्ट के सहयोग से अश्विनी अस्पताल के सुधार हेतु उपाय किए गए हैं। अभी से अपोलो एवं टाटा ट्रस्टों की सहयोगिता से तिरुमल के अश्विनी अस्पलात में बेहतर चिकित्सा सेवा प्रदान की जाती है। इसलिए सब सदुपयोग करने केलिए बताया गया।

श्रीशैलम भगवानजी को ति.ति.दे. की ओर से रेशम कपड समर्पण

१७ फरवरी, २०२०, सोमवार को ति.ति.दे. न्यासमंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी एवं कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस., ने ति.ति.दे. की ओर से श्रीशैलम में स्थित श्रीभ्रमराम्बा सहित मल्लिकार्जुन स्वामी को रेशम कपडे समर्पित किए गए। इनको श्रीशैलम देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री के.यस.रामाराव एवं अर्चक स्वामियों ने स्वागत किया।

श्रीकालहस्ति भगवानजी को ति.ति.दे. की ओर से रेशम कपड समर्पण

२३ फरवरी, २०२०, रविवार को चित्तूर जिले के श्रीकालहस्ति में आयोजित किए गए महाशिवरात्रि वार्षिक ब्रह्मोत्सवों में अत्यंत प्रशस्ति होनेवाली कल्याणोत्सव के संदर्भ में सोमस्कन्दमूर्ति, ज्ञानांबिका के लिए ति.ति.देवस्थान की तरफ से ति.ति.दे. न्यासमंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी एवं कार्यनिर्वहणाधिकारी और श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस., दंपतियों ने रेशम कपडे समर्पित किए गए।

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana, M.A., M.Phil, Ph.D.,** Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुपति

श्री गोविंदराजस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

दि. २८-०५-२०२० से दि. ०५-०६-२०२० तक

२८-०५-२०२०
गुरुवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

२९-०५-२०२०
शुक्रवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

३०-०५-२०२०
शनिवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

३१-०५-२०२०
रविवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

०१-०६-२०२०
सोमवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

०२-०६-२०२०
मंगलवार
दिन - हनुमन्तवाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

०३-०६-२०२०
बुधवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

०४-०६-२०२०
गुरुवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

०५-०६-२०२०
शुक्रवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
printing on 25-03-2020. Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742.
Postal Regd.No.TRP/11-2018-2020, Licensed to post without prepayment
No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020

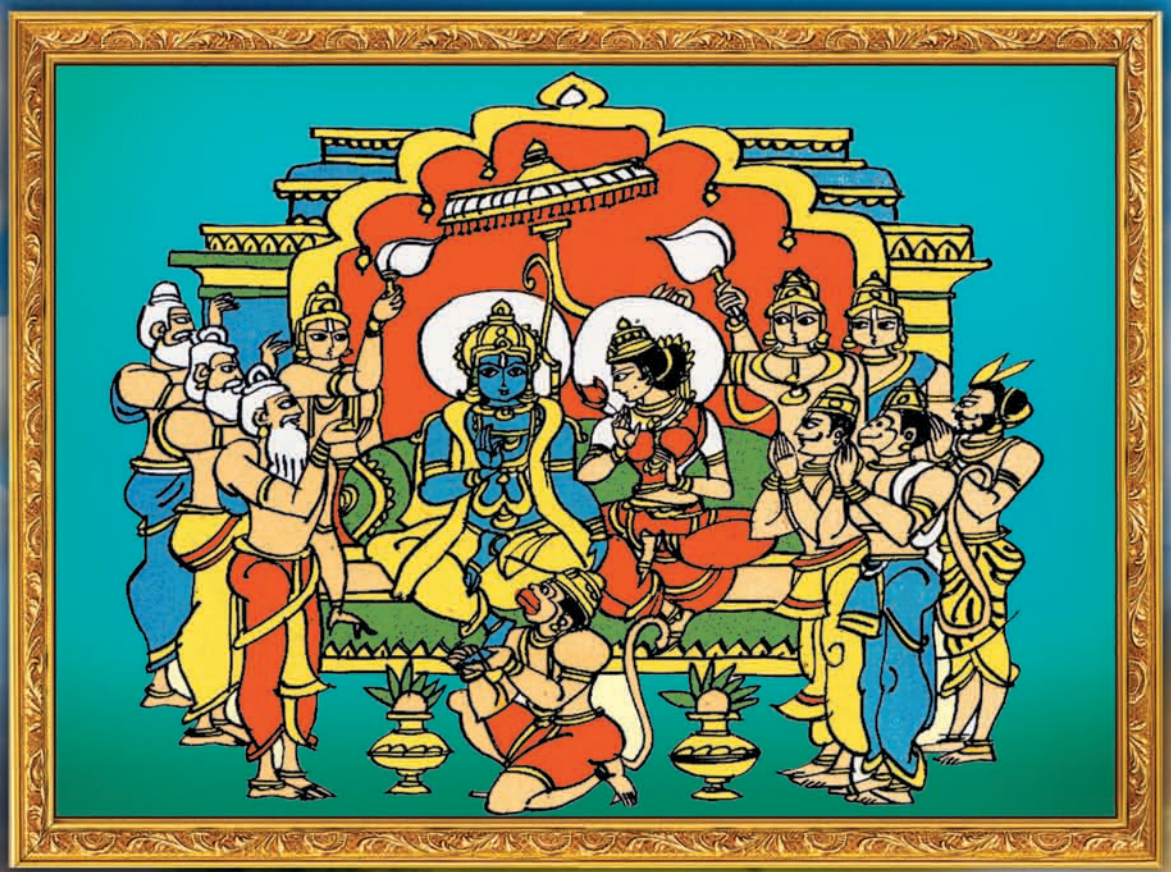

अयोध्या में बडे पैमाने में, वैभवपूर्ण ढंग से श्रीराम का पट्टाभिषेक हुआ। राम ने जब तक शासन चलाया, तब तक उनकी प्रजा ने बिना किसी कष्ट के सुख-शांति एवं संतोषकर जीवन बिताया। राम के शासन काल में धर्मदेवता के चारों चरण चलती रहे। राम का शासन, बाद के शासकों केलिए आदर्शदायक बना। इसीलिए उनका शासन काल 'राम राज्य' के नाम से अभिहित होकर, लाक्षणिक बनकर सदा-सर्वदा के लिए शाश्वत रूप धारण कर गया।